सो क्या जाने पीर पराई

सो क्या जाने पीर पराई

मीरा महादेवन

राजकमल प्रकाशन
दिल्ली-इलाहाबाद-बम्बई-पटना

१

दोपहर का डेढ़ बज रहा था। फ़ोर्ट के सभी उपाहार-गृह खचाखच भर गए थे। हर एक को खाकर अपने दफ़्तर लौटने की जल्दी थी। 'शान्ति उपाहार-गृह' का तो पूछना ही क्या ? रसोईघर के धुएँ तथा तेल की बदबू से कोई भी नया व्यक्ति वहाँ जाने का साहस न करता। किन्तु अन्य उपाहार-गृहों से सस्ता भोजन होने के कारण यहाँ प्रायः अधिक भीड़ देखी जाती। भीड़ को सँभालता हुआ उसका मालिक हर ग्राहक को बराबर देख रहा था। जहाँ कोई नया ग्राहक दिखायी देता, उसके पास जाकर वह स्वयं उसकी आवश्यकताएं पूर्ण करता था।

भीतर एक ओर एक बड़ा-सा कमरा था, जिस पर अंग्रेज़ी में 'फेमिली रूम' का बोर्ड टँगा था। अन्दर दो मेज़ें पड़ी थीं, जिन पर पाँच-छः लड़कियाँ भोजन कर रही थीं। उनके खाने के ढंग से ऐसा लग रहा था जैसे उन्हें कहीं जाने की जल्दी नहीं थी। पल-भर के लिए उनके सिर पास आते, फिर खिलखिलाकर हँसने की ध्वनि के साथ पीछे हट जाते।

हँसी का ज़ोर कम होते ही शरद ने रजनी से पूछा, "इसे जानती हो ?"

"नहीं तो।"

"इसका नाम है माधवी। यहीं एक प्रेस में टाइपिस्ट का काम करती है। अभी हाल बम्बई ही में आयी है।"

"ओह !" रजनी ने माधवी को सिर से पैर तक घूरा।

माधवी को उसी क्षण रजनी से घृणा हो गई और शरद पर क्रोध आया। उसे लगा, जैसे रजनी लुटेरों की सरदार है और शरद माधवी को उसके दल में दाखिल कराने ले आई है।

उसी समय रजनी ने धीमी आवाज़ में पूछा, "बम्बई में जी लगता है

या नहीं ?"

"लगता क्यों नहीं ?" वह फिर अपना टिफ़िन खाने लगी।

"आज पुष्पा कहाँ गयी ?" ग्रेसी ने पूछा।

शरद ने रजनी की ओर देखा। रजनी ने व्यंग-भरी गम्भीरता से कहा, "गयी होगी, वोल्गा में खाना खाने। उसका क्या कहना ! अपनी जैसी ग़रीब वह थोड़े है !"

"यह मुँह और मसूर की दाल ! घर देखा है उसका ? तुम्हारे रसोई-घर जितना होगा।" सरोज ने रजनी से कहा।

"अरे सरोज, तू मेरी बात नहीं समझी। वह सुन्दर है न ! बस, इतना पर्याप्त है बम्बई शहर में। फिर वह धूर्त भी बड़ी है। और उसकी माँ कौनसी कम है !" रजनी ने पानी का गिलास मुँह से लगाया।

"सच कहती हो, रजनी ?" ग्रेसी ने रजनी के कंधे हिलाकर पूछा, "शक्ल से तो वह ऐसी नहीं लगती। अक्सर ऐसा ही होता है, जो लड़की देखने में शान्त होती है, वह भीतर से शैतान होती है। और हमारे-जैसी मुँहफट लड़कियाँ बेकार बदनाम होती हैं।" ग्रेसी मुँह पोंछकर लिपस्टिक लगाने में मगन हो गई। एक मिनट बाद उसने पूछा, "क्यों रजनी ! वोल्गा में वह किसके साथ जाती है ?"

"अरे भई, वह उसकी दुकान का मैनेजर है ना, उसके साथ। पर वह एक के ही साथ जाने वालों में से नहीं है। वह पंजाबी, जिसकी किताबों की दुकान है, उसके साथ तो उसकी इतनी बनती थी कि···"

रजनी रुक गई। फिर धीमी आवाज़ में कुछ कहा, जिसे सुनकर सबके चेहरे पर आतंक छा गया।

"क्या कहती हो, रजनी ?"

"ताज्जुब है, तुम इतनी मामूली बात नहीं समझ सकतीं। उसका शरीर, देखनी नहीं कैसा होता जा रहा है !" रजनी का अनुभव बोल रहा था।

इतनी बातें माधवी चुपचाप सुनती रही थी। उसे उन लड़कियों से

घृणा हो गई। वह उठ गई और शरद से कहकर जाने के लिए दरवाजा खोल दिया। उसी समय पुष्पा भीतर आ गई और माधवी कुछ देर के लिए स्तम्भित-सी उसे देखती रह गई। पुष्पा सचमुच सुन्दर थी। उसका साफ़ रंग तथा भोला चेहरा माधवी को बहुत ही अच्छा लगा। वह एक सफ़ेद धोती पहने थी। अपने लम्बे-घने बालों की एक चोटी पीठ पर छोड़ रखी थी। आभूषण नाम-मात्र को भी नहीं था।

पुष्पा के आते ही सभी ने उसका ऐसा स्वागत किया कि माधवी को हँसी आई। वह खड़ी-खड़ी तमाशा देख रही थी। अभी-अभी जिस रजनी ने पुष्पा की इतनी बुराई की थी, वही उससे घुल-मिलकर बातें करने लगी। ग्रेसी का तो पूछना ही क्या! वह उससे ऐसा प्यार जताती थी, जैसे बिना पुष्पा के उसका जीना असम्भव हो।

पुष्पा ने माधवी का हाथ पकड़कर कहा, "बैठोगी नहीं? चाय पीकर जाना।"

माधवी पर उसका जादू उसी समय चल गया। वह बैठ गई। पुष्पा ने अपना हाथ हटाया नहीं, पूछा, "नाम क्या है तुम्हारा?"

"माधवी।"

"मेरा नाम है पुष्पा।"

फिर कई प्रश्नोत्तर हुए और माधवी पुष्पा से दूसरे दिन मिलने का वायदा करके वहाँ से चल पड़ी। रास्ते में वह पुष्पा के विषय में ही सोच रही थी। आज प्रथम बार माधवी दफ्तर जाते समय प्रसन्न थी। जिस प्रेस में वह काम करती थी, वहाँ उसे काफ़ी काम करना पड़ता। समय पर घर नहीं जा पाती, और समय पर पैसे न देने की उस प्रेस-मालिक की आदत थी।··· खैर, अब वह बहुत जल्द शार्टहैण्ड सीखकर अच्छी नौकरी करने लगेगी। फिर वह केवल पुष्पा से ही मिलने जाएगी। उस शान्त उपाहार-गृह में भूलकर भी न जाएगी। उसे ग्रेसी का चेहरा याद आया। पुष्पा का उजला रंग देखकर वह जलती होगी। मेकअप भी उसकी कोई विशेष सहायता कर नहीं पाता था।

२

भारती प्रेस के मालिक रसिकलाल की माली हालत ठीक नहीं थी। समय पर पैसे न मिलने के कारण हर दूसरे-तीसरे महीने उनके नौकर बदलते रहते। माधवी को उनके यहाँ काम करते डेढ़ महीना हो चुका था, किन्तु अब तक उसे एक कौड़ी भी न मिली थी। माधवी दूसरी नौकरी की तलाश में लगी हुई थी। हाँ, रसिकलाल अपनी फ़िलासफ़ी के ज़ोर पर टिके हुए थे। वे कहते, "माधवी बेन, अब कुछ ही दिन की बात है, मैं आपकी तनख्वाह बढ़ा दूँगा। आप मेरा इन परिस्थितियों में साथ दे रही हैं, यह क्या कम है? पैसे की मैंने कभी परवाह नहीं की और न करूँगा।" माधवी चुप रहती। दो दिन तक कहीं नौकरी की तलाश न करती, किन्तु उसे पैसे की आवश्यकता थी। वह रसिकलाल की फ़िलासफ़ी सुन-सुनकर ऊब चुकी थी। काम करवाकर पैसे न देना माधवी के विचार से एक अत्यन्त घृणित काम था। वह उनके दर्शन को ढकोसला-मात्र समझने लगी थी।

एक दिन वह किसी जगह काम के लिए मिलने जा रही थी कि अचानक रजनी मिल गई। बातचीत के दौरान में माधवी ने उसे अपने काम के बारे में बताया। रजनी पल-भर कुछ सोचती रही और फिर माधवी को लेकर 'शान्ति उपाहार-गृह' की ओर चल पड़ी। माधवी मन-ही-मन पछताने लगी कि किस कुसमय वह बात उसके मुँह से निकली! रजनी सीधे 'शान्ति उपाहार-गृह' जाकर फ़ोन करने लगी। माधवी चुप उसकी बातें सुनने लगी। उसे यह समझते देर न लगी कि रजनी उसकी नौकरी के लिए प्रयत्न कर रही है। फोन बन्द करके दोनों फ़ेमिली रूम में बैठ गईं। रजनी ने चाय मँगा ली।

"लगता है, तुमने मैट्रिक पास नहीं किया है।"

"यदि किया होता तो सरकारी दफ़्तर में लग जाती," माधवी की आवाज़ से उदासी टपक रही थी।

"अरे, तो इसमें कोई बात नहीं ! कितनी ही लड़कियाँ बिना मैट्रिक के भी जी रही हैं। तुम्हें अभी अनुभव कम है, नहीं तो इतनी छोटी-सी बात से परेशान न होती।"

माधवी चुप रही। कई प्रश्न उसके मस्तिष्क में आ रहे थे, किन्तु रजनी से कुछ पूछने का साहस नहीं हो रहा था। उसे अब रजनी उतनी बुरी नहीं लग रही थी।

"तुमने प्रेस का काम छोड़ दिया ?" रजनी ने माधवी का मौन भंग करते हुए पूछा।

"नहीं," माधवी फिर खो गई।

रजनी ने देखा, माधवी हद से ज़्यादा परेशान है। उसकी तीक्ष्ण दृष्टि माधवी को घूर रही थी। माधवी सुन्दर नहीं थी, किन्तु उसकी आँखें उसे असुन्दर बनने से बचाती थीं। उन आँखों में ऐसी चमक थी, जो किसी को भी अपना बना सकती थी। रंग साँवला होने पर भी स्वच्छ त्वचा उसकी शोभा को दुगुना करती थी। क़द न छोटा था, न लम्बा। हाँ, कपड़े पहनने का ढंग अवश्य भद्दा था। घर के सिले कपड़े, जो अपेक्षाकृत बड़े लग रहे थे, उसकी शरीर-यष्टि को छिपा रहे थे।

नौकर चाय लेकर आ गया। चाय रखकर उसने रजनी की ओर देखा।

रजनी समझ गई। कहा, "क्या बात है ? आये थे क्या ?"

"हाँ, अभी दुबारा आने को कह गए हैं।" वह मेज़ पोंछने लगा।

माधवी की दृष्टि उस कपड़े पर थी। उस मैले कपड़े के कारण मेज़ और भी गन्दी लगने लगी। बदबू के कारण माधवी उस चाय की ओर देख भी न सकी।

रजनी ने बैग से शीशा निकाला और मुँह पर पाउडर लगाने लगी। बाल, जो अच्छी तरह बने हुए थे, हाथ से दबाकर और भी ठीक कर लिये। माधवी कुछ समझी, कुछ नहीं भी। उसने कहा, "तो अब मैं जाऊँ ?"

"कहीं जाना है क्या तुम्हें ? मैंने तुम्हारे ही लिए तो घोष बाबू को फोन करके बुलाया है।" रजनी ने चाय पीते-पीते कहा।

माधवी बैठ गई, किन्तु उसने चाय नहीं पी। उसका मन कह रहा था—माधवी, यहाँ न आने की क़सम ली थी तुमने, फिर यहीं आकर बैठी हो ?

माधवी ने अपने मन को जवाब दिया—नफ़रत तो मुझे रजनी से थी, सो अब नहीं रही। फिर इस जगह न आने का कोई कारण ही नहीं बचता।

लेकिन माधवी का सनातनी मन चुप न रह सका। कहने लगा—माधवी, रजनी को तुम जानती नहीं, पहचानती नहीं, उसके साथ बैठी हो, उसके मित्र से मिलने जा रही हो ? जानती हो, बम्बई में किसी पर विश्वास नहीं करना चाहिए। भला रजनी इस समय होटल में क्यों बैठी है ? क्यों आज वह अपने दफ़्तर नहीं गयी ?

माधवी ने इसका भी समाधान किया—शायद आज रजनी की छुट्टी है और यह मित्र उसका मंगेतर हो सकता है।

माधवी की विचार-शृङ्खला घोष बाबू के आने से टूट गई। श्याम-वर्ण, छोटा क़द। तीस से अधिक आयु के उस बंगाली सज्जन ने हाथ जोड़कर माधवी को नमस्कार किया और रजनी को मीठी हँसी से देखा।

"यह है माधवी। इसे काम की तलाश है। आपने उस दिन कहा था कि आपको एक टाइपिस्ट की आवश्यकता है। इसलिए सोचा आपसे मिला दूँ।"

घोष बाबू पसीना पोंछने में व्यस्त थे। माधवी और रजनी उन्हें देख रही थीं।

"चलो, यहाँ से कहीं और चलें। यहाँ तो बारह महीने गरमी रहती है। चलिए, मिस···मिस···" घोष बाबू नाम भूल गए थे।

रजनी हँसने लगी। विवश होकर माधवी को भी हँसना पड़ा। किसी ने उन्हें माधवी के नाम की याद नहीं दिलाई। रजनी उनकी आदत

जानती थी, किन्तु माधवी के अहं को चोट लगी। रजनी बाहर निकल गई और घोष बाबू माधवी के लिए दरवाज़ा खोले खड़े रहे। माधवा पहले कुछ लजाई, फिर रजनी के साथ हो ली। इन्कार करने का समय ही न था। अभी सड़क पर आये भी न थे कि घोष बाबू ने एक टैक्सी रुकवाई। रजनी पहले बैठी, फिर घोष बाबू और बाद में माधवी।

घोष बाबू जहाँ रजनी और माधवी को ले आये वह सचमुच ही शान्त जगह थी। मेज़ें एक-दूसरे से काफ़ी दूर-दूर पड़ी हुई थीं। लोग बहुत कम थे। कहीं से पाश्चात्य संगीत के स्वर आकर भर रहे थे। माधवी पहले तो हिचकिचायी, किन्तु रजनी को देख उसका अनुकरण करने लगी। घोष बाबू दोनों के लिए खाना मँगाने लगे, तो माधवी ने मना किया।

"अच्छा तो आइसक्रीम खा लो।"

माधवी चुप रही।

रजनी ने डट के खाया और खाने के बाद आइसक्रीम मँगा ली। घोष बाबू ने केवल चाय पी। माधवी मन-ही-मन पैसे गिन रही थी। खाते-पीते तीन बज गए। माधवी ने घर जाने की बात छेड़ी, तो रजनी ने घोष बाबू की ओर संकेत किया। "आपसे पूछ लो, अब तुम उनकी मेह-मान हो।"

माधवी ने घोष बाबू की ओर देखा। उन्होंने कहा, "जल्दी क्या है, हम पिक्चर देखने जा रहे हैं, आप भी चलिए।"

"इतना कहते हैं तो चली चलो। तुम्हारी परेशानी भी कुछ कम होगी।" रजनी ने बड़े प्यार से कहा।

अभी बातें हो ही रही थीं कि घोष बाबू ने एक टैक्सी रुकवाई। दरवाज़ा खोलकर घोष बाबू ने मुस्कराकर माधवी की ओर देखा। माधवी टैक्सी में बैठ गई और टैक्सी चलने लगी।

माधवी का मन उसे उलाहना दे रहा था—माधवी यह ठीक नहीं हो रहा है। माधवी चुप रही, लेकिन मन चुप न रह सका। वह चिल्ला रहा था—माधवी, यह ठीक नहीं हो रहा है।···यह ठीक नहीं हो रहा है।···

किन्तु घोष बाबू और रजनी की हँसी और टैक्सी की घर्र-घर्र के कारण माधवी के मन की आवाज़ कान तक न पहुँच पा रही थी।

३

माधवी ने प्रेस का काम छोड़ दिया। जो कुछ पैसे मिले उसने घर पर दे दिये और दूसरा काम ढूँढ़ने लगी। उसका घोष बाबू से संपर्क बढ़ रहा था। घोष बाबू की बातों में बड़ा ही आकर्षण था। अपनी आयु का तो उन्हें स्मरण ही न रहता। हर वक्त कुछ-न-कुछ कार्यक्रम बनाते रहते। एक दिन उन्होंने कहा कि जुहू बड़ी अच्छी जगह है।

"सच ?"

"हाँ चलो, आज जुहू घूम आते हैं।"

"और रजनी ? वह भी आएगी न ?" माधवी ने सहसा पूछा।

"मुझसे डरती हो क्या ?" घोष बाबू ने मुस्कराते हुए पूछा।

"नहीं-नहीं, डरने का क्या सवाल है ?"

"तो फिर चलो, मैं फोन करके आता हूँ।" घोष बाबू फोन करने चले गये।

माधवी की बुरी हालत हो रही थी। घोष बाबू का साथ छोड़ना उसे अच्छा नहीं लग रहा था और इतनी दूर उनके साथ जाने में डर भी लगता था। भीतर से माधवी का मन चीख रहा था—किसी पर-पुरुष के साथ अकेले इतनी दूर जाना पाप है, माधवी ! इस तरह तो एक दिन तुम अपने शील से च्युत हो जाओगी। चलो माधवी, माँ ने घर पर तुम्हारा खाना रखा होगा। घर चलो माधवी, घर चलो। अभी भी तुम इस जाल से निकल सकती हो। माधवी खो गई। वहीं जड़वत् होकर बैठ गई।

फ़ोन के पास से घोष बाबू की आवाज़ आ रही थी ।

"माधवी, माधवी ! क्या बात है ? सो गई थी क्या ? चलो, टैक्सी आ गई है । मैंने कुछ नाश्ता भी ले लिया है साथ में । चलो ।"

माधवी जाकर उनके साथ टैक्सी में बैठ गई ।

"सिर में क्या दर्द हो रहा है, माधवी ?" घोष बाबू ने अपनी मृदुल आवाज़ में पूछा ।

"जी नहीं, मैं ठीक हूँ ।" माधवी ने उनकी तरफ़ देखा ।

घोष बाबू उसकी परेशानी का कारण समझ गए । उन्होंने कहा, "माधवी, मुझ पर विश्वास रखो । तुम्हारे काम का प्रबन्ध एक-दो दिन में हो जाएगा । अगर तुम्हें रुपये चाहिए तो मुझसे ले लो ।"

"ना-ना, रुपये मैं क्या करूँगी ? मुझे काम की आवश्यकता है ।"

"घर पर तुमने क्या कहा है अपनी माताजी से ?"

"यही कि मैं नौकरी ढूँढ़ रही हूँ ।"

"अच्छा, आज शाम को उनसे कह देना कि तुम्हें डेढ़ सौ रुपये का काम मिल गया है ।"

"क्या मतलब ?" सशंकित माधवी ने पूछा ।

"मतलब यह कि कल से तुम मेरे दफ़्तर में काम करने लग जाओगी । और तुम्हें डेढ़ सौ रुपये माहवार मिलेंगे ।"

"सच ?" माधवी का चेहरा एकदम खिल उठा, आँखों में चमक-सी आ गई ।

घोष बाबू ने अपना पसीना पोंछ डाला ।

जुहू में घोष बाबू के मित्र के घर जब माधवी पहुँची तो वहाँ सिवा दो नौकर और एक माली के किसी को न देखकर आश्चर्य में पड़ गई । उसे घोष बाबू से पता चला कि वे लोग यहाँ कभी-कभी आते हैं । उनका दूसरा एक मकान मरीन ड्राइव पर भी है ।

घोष बाबू ने चाय बनवायी और साथ लाया हुआ नाश्ता निकाल-कर माधवी के सामने रख दिया । दोनों ने मिलकर खाया और समुद्र-

किनारे घूमने चले।

घोष बाबू माधवी को बहुत सारी बातें बताते रहते थे। अब वह उन्हें मानने लगी थी। उनकी बातें सुनने में उसे आनन्द आता और उन्हें सुनाने में। घण्टों न जाने क्या-क्या बातें होती रहतीं। इन्हीं बातों ने माधवी के सनातनी विचारों को धीरे-धीरे, उसके अनजाने ही, बदल दिया था।

शाम को घर लौटते समय माधवी मन-ही-मन घोष बाबू की प्रशंसा करने लगी। अब तक उन्होंने माधवी का हाथ भी अपने हाथ में न लिया था—भूल से छुआ तक न था। इतना अच्छा मित्र कभी उसे मिलेगा ऐसी उसे कल्पना भी नहीं थी। वह कितनी भाग्यशाली है कि अब घोष बाबू के साथ ही काम करेगी!···माधवी ने अपना हृदय अनजाने ही उन्हें दे दिया। रहा तन का सवाल, सो उसकी चिन्ता घोष बाबू को नहीं थी। वे पहले मन को अपना बना लेते हैं, फिर तन तो स्वयं आ जाता है। फिर वह ब्याज समेत सब वसूल कर लेते हैं। इस मामले में वे बड़े माहिर हैं।

४

घोष बाबू के दफ़्तर में माधवी के दिन बड़े आराम से कट रहे थे। वह सवेरे दस बजे दफ़्तर जाती, तीन बजे तक कुछ काम करती, फिर घोष बाबू के साथ कुछ-न-कुछ प्रोग्राम बना लेती। उनके बिना उसे तनिक भी चैन न आता। घोष बाबू जानकर भी अनजान बनते। अब तक उन्होंने माधवी को कई साड़ियाँ भेंट की थीं। माधवी सब-कुछ घर ले जाती और उसके माता-पिता किसी प्रकार की आपत्ति न करते। उन्हें इस बात की शंका भी न हुई कि उनकी माधवी किसी से प्रेम कर रही है। अक्सर ऐसा ही हुआ करता है, आपका घर जब जलने लगता

है तो आपके पड़ोसी पहले देखते हैं। माधवी की यह बात सबने देखी, केवल उसके माता-पिता ने नहीं देखी। माधवी की हिम्मत बढ़ती गई। वह घोष बाबू के साथ रात-रात तक घूमती। घर लौटते समय कोई झूठा बहाना सोच लेती और अपने माँ-बाप की किसी-न-किसी तरह तसल्ली कर देती।

एक दिन माधवी दफ़्तर पहुँची तो वहाँ पता चला कि घोष बाबू पूना चले गये हैं। उसका सिर चकरा गया। वह वहीं बैठ गई।

चपरासी घबरा गया। उसने कहा, "कल आ जाएँगे।"

माधवी शरमा गई। सँभलकर वह अपनी जगह पर जाकर बैठ गई, लेकिन उसे कुछ भाता ही नहीं था। वे दीवारें, वह मेज़, वह घोष बाबू की कुरसी ! उफ़ ! कितनी वीरान जगह है यह ! जब फूल ही नहीं तो क्यारी किस काम की ! उसका गला सूख गया, आँखें भर आना चाहती थीं। उसे जगह का ध्यान ही न रहा।

चपरासी ने आकर पूछा, "चाय ले आऊँ ?"

"हूँ ?···क्या ?···हाँ-हाँ, ले आओ।"

माधवी फिर सोच में डूब गई। धीरे-धीरे वह अपने-आपको ढाढस बँधा रही थी। आज पहली बार उसने अपनी ऐसी दशा देखी थी। उसे बड़ी आत्मग्लानि हुई, अपने-आप पर क्रोध भी आया।···उसी समय जैसे घोष बाबू की आवाज़ सुनायी दी। उसने चौंककर दरवाज़े की ओर देखा। छिः ! उसे कैसा भ्रम हुआ ! महाराज चाय ला रहा था। माधवी चुपचाप उसे देखती रही।

चाय पीकर माधवी ने टाइपराइटर पर सिर रखकर आँखें मूँद लीं। माधवी के मनश्चक्षु घोष बाबू को देखने लगे। हँसते हुए वे पूछ रहे थे—आज कहाँ ले जाओगी, माधवी ?···माधवी की आँखों से पानी झरने लगा। उसने चुपके-से आँखें पोंछ लीं। लेकिन मस्तिष्क से उन विचारों को निकाल न सकी। फोन की घण्टी ने माधवी को फिर एक बार चौंका दिया। चपरासी दौड़ता हुआ आया, किन्तु माधवी ने उससे पहले ही फोन

उठा लिया था। एक अपरिचित महिला मिस माधवी को पूछ रही थी।

"हाँ, कहिए।"

"एक मिनट" कहकर वह अपरिचिता रुक गई और दूसरे ही क्षण घोष बाबू की आवाज़ उसके कानों में गूँज उठी, "हलो, माधवी !"

माधवी का दम जैसे घुटा जा रहा था। वह जवाब न दे सकी।

"नाराज़ हो क्या ?"

"नहीं, नहीं ! आप कहाँ से बोल रहे हैं ?" माधवी ने अपनी रुँधी हुई आवाज़ में पूछा।

"तुम्हारी आवाज को यह क्या हो गया है ? ठीक तो हो ?"

"नहीं, बहुत परेशान हूँ।" माधवी ने अन्त में अपनी नाज़ुक आवाज़ में कह ही डाला।

"सच ? तो टैक्सी लेकर यहाँ आ जाओ।" घोष बाबू ने पता बताया।

माधवी फोन बन्द करके, बैग उठाकर दौड़ती हुई नीचे उतरने लगी। वह इतनी तेज़ उतर रही थी कि चपरासी की साँस ही रुक-सी गई। जब वह नीचे पहुँची, तब जाकर उस ग़रीब ने साँस ली।

जब माधवी 'जास्मिन होटल' पहुँची तो उसकी शान देखकर दंग रह गई। उसे घोष बाबू के पास पहुँचाया गया। वह एक आलीशान कमरा था। माधवी की नज़र एक कोने से दूसरे कोने तक दौड़ गई। एक सुन्दर सोफ़ासेट, उसके बीच फूलों से लदी एक छोटी मेज़, दो बड़ी अलमारियाँ, दो शानदार पलंग, एक ड्रेसिंग टेबल, कोने में एक खाने की मेज़, दरवाज़े तथा खिड़कियों पर सुन्दर फूलदान, मोटे पर्दे लगे थे, जिनका रंग कमरे को कुछ अंधकारमय बनाने में सहायक था।

घोष बाबू कमरे के बाहर ही खड़े थे। माधवी के भीतर आते ही उन्होंने दरवाज़ा बन्द कर दिया था। माधवी के हृदय में अजीब धड़कनें हो रही थीं। वह घोष बाबू से आँख मिलाने से डरती थी। बैग रखकर उसने उनकी ओर देखा। वे उसे इतने प्यार से देख रहे थे कि माधवी

अपने-आपको सँभाल न सकी। वह भागकर सोफ़े पर जा बैठी और मुँह दोनों हाथों में छिपाकर रोने लगी। रोने की तो कोई आवश्यकता नहीं थी, फिर भी वह रो रही थी।

घोष बाबू उसके पास आ बैठे।

"माधवी!"

माधवी ने सिर हिलाकर पूछा, "क्या?"

"यहाँ देखो, माधवी!

माधवी लज्जा से गड़ी जा रही थी।

"माधवी!"

माधवी ने हाथ नीचे कर लिये और आँख पोंछकर ज़मीन ताकने लगी।

"माधवी, इधर देखो।"

एक नज़र उन्हें देखकर वह फिर आँख पोंछने लगी।

घोष बाबू अपने रूमाल से उसकी आँख पोंछने लगे। माधवी ने कुछ कहा नहीं। घोष बाबू उसके सिर पर हाथ फेरने लगे। माधवी शिथिल होती जा रही थी, किन्तु घोष बाबू का स्पर्श उसे जलती शिखा के समान बना रहा था। घोष बाबू मँजे हुए शिकारी थे। छः महीने से वे यह आग सुलगा रहे थे, ताकि उसे शीतल करने का आनन्द नहीं, ब्रह्मानन्द उन्हें मिल सके। आज माधवी अपने तन की वह आग बुझाने आयी थी, जो बुझाने से बुझती नहीं, बल्कि और भी धधक उठती है।

५

दो साल के भीतर-भीतर माधवी पूरी तरह बम्बइया बन चुकी। घर पर उसके पैर न रुकते। केवल सोने-भर को वह घर जाती। बाकी समय घोष बाबू तथा उनके मित्रों

के साथ ही कटता। माधवी को अब दस पुरुषों के बीच भी कोई संकोच न लगता। शहर के कई नामी कलाकार, लेखक, चित्र-निर्माता आदि उसके परिचित थे।

माधवी भोली थी किन्तु बुद्धू न थी। माधवी का भोलापन अब केवल उसके चेहरे पर भाव-स्वरूप रहता, उसका असली भोलापन खत्म हो चुका था। माधवी स्वभाव से ही निडर थी, किन्तु अब उसके पर निकल आए थे। अक्सर वह दफ़्तर में बैठे-बैठे थक जाती तो फ़ौरन किसी को फोन कर लेती। कोई जगह तय करके वहाँ जाकर, उनके साथ दो घड़ी बैठकर, चाय पीकर, वह चली आती। घोष बाबू को इसमें तनिक भी आपत्ति न थी।

एक दिन माधवी और घोष बाबू ने माहीम के बस स्टाप पर मिलना तय किया। घोष बाबू समय के पाबन्द थे। माधवी ने भी उनसे यह बात सीख ली थी। तीन बज रहे थे, माधवी अपना बैग सँभाले माहीम पहुँची। घोष बाबू को वहाँ न देखकर वह सोच में पड़ गई। माहीम के प्रशस्त मार्ग पर गाड़ियाँ तेज़ रफ़्तार से दौड़ रही थीं। अचानक उसने मनोहर की गाड़ी आते देखी। गाड़ी धीरे-धीरे आ रही थी और मनोहर बाहर देख रहा था, मानो किसी को ढूँढ़ रहा हो। माधवी भीड़ में छिप गई। गाड़ी चली गई। माधवी का हृदय धक्-धक् कर रहा था। उसे न जाने क्यों मनोहर से चिढ़ थी। मनोहर की आँखें पाप से भरी रहतीं। घोष बाबू के खास मित्र हैं आप। अमीर होंगे तो अपने घर के, माधवी ने नाक चढ़ा ली। सामने से फिर मनोहर की गाड़ी आ रही थी। माधवी फिर एक बार भीड़ में छिप गई। वहाँ से निकलकर अब वह घर जाने की सोचने लगी। वह रास्ता पार कर स्टेशन की ओर चल पड़ी। माधवी के विचार उसके मस्तिष्क में ताण्डव कर रहे थे। क्यों घोष बाबू नहीं आये? मनोहर को कैसे पता चला कि मैं यहाँ हूँ? क्या घोष बाबू ने उसे भेजा है? क्यों? उसका मन किसी प्रकार भी घोष बाबू की बुराई न कर पाता था। कल ही वह उनसे इस बात का जवाब लेगी।

माहीम से दादर आकर माधवी माटुंगा की गाड़ी के लिए दौड़ती हुई जा रही थी कि उसने एक परिचित आवाज़ सुनी—"हलो, मिस माधवी !"

"ओहो ! मिस्टर थामस ! आप !"

"हूँ !" मिस्टर थामस अपनी मीठी हँसी हँस रहे थे। थामस साहब दक्षिण भारतीय थे। ईसाई होने पर भी अक्सर राष्ट्रीय पोशाक पहनते। आज तक माधवी ने उनसे केवल पुस्तकों की ही चर्चा सुनी थी। उनके कारण ही माधवी कुछ-कुछ साहित्य की ओर झुक रही थी। आज उन्होंने अपने थैले से एक पुस्तक निकालकर माधवी को दी—डिकन्स का 'पिक्-विक् पेपर्स'। माधवी पुस्तक देखने लगी। फिर उन्होंने एक समाचार-पत्र निकालकर माधवी से पढ़ने के लिए कहा। वह एक हिन्दी पत्रिका का रिव्यू था, जो गत सप्ताह माधवी ने लिखा था। रिव्यू के नीचे उसका नाम छपा था। माधवी का मन गर्व से फूल उठा। तो क्या वह भी लिख सकती है ?

"अरे, तो आपने यह छाप दिया ?"

"हाँ। तुमने उस पत्र को अच्छी तरह देखा था, इसलिए मुझे तुम्हारे ही विचार अच्छे लगे। इसके लिए तुम्हें हमारे पत्र की ओर से पाँच रुपये मिलेंगे।"

"लेकिन आधा काम तो आपने किया है, सो मुझे केवल ढाई रुपये दीजिएगा।"

थामस साहब ज़ोर से हँसने लगे। माधवी भी हँस पड़ी।

"अच्छा, अब मैं जा रही हूँ।"

"ओ०के०, कल आओगी न ?"

"कहाँ ?"

"दफ्तर आ जाओ। अपने एक मित्र से तुम्हारा परिचय कराऊँगा।"

"अच्छी बात है, मैं आ जाऊँगी।" माधवी की गाड़ी आ चुकी थी, वह नमस्ते कहे बिना ही चल पड़ी।

सो क्या जाने पीर पराई

६

दूसरे दिन माधवी पुष्पा से मिलने गयी। सवेरे से घोष बाबू दफ्तर नहीं आये थे। काम तो माधवी को वैसे भी कुछ नहीं था। इसके अतिरिक्त कल की घटना को वह किसी प्रकार भुला न सकी थी। बार-बार वह विचार उसके मन को उद्विग्न कर रहा था।

पुष्पा माधवी को देखकर कुछ मुस्करायी और कहने लगी, "अब फ़ुरसत हुई जनाब को ?"

"क्यों ? देर से ही सही, मुझे याद तो आई। तुमसे तो उतना भी नहीं बना।"

दोनों कैंटीन में जाकर बैठ गईं। माधवी रोज़ की अपेक्षा आज चुप थी।

"क्या सोच रही हो माधवी ? लगता है, दुनिया-भर का दुःख तुम्हीं को ढोना है।"

माधवी मज़ाक के मूड में नहीं थी। उसने पुष्पा के पास जाकर पूछा, "तुम घोष बाबू को जानती हो न ?"

"अरे, घोष बाबू ही नहीं, उनकी सात पुश्तों को भी जानती हूँ।"

"मज़ाक छोड़ो। तुम क्या जानती हो, यह बताओ।"

"पहले तुम तो कुछ बताओ, फिर मैं तुम्हें सही बात बता दूँगी।"

माधवी ने उसे पूरी घटना सुना दी। पुष्पा गम्भीर हो गई।

"ताज्जुब है कि अभी तक तुम इनकी करतूतों को न जान सकीं। असल में उन्होंने तुम्हारे साथ काफ़ी सावधानी से काम लिया है।"

"क्या मतलब ?"

"देखो, उनका जो दफ्तर है न, उसे तो मनोहर चला रहा है और उनका बिज़नेस है लड़कियाँ फाँसना। मनोहर का असली नाम है सेठ अर्जुन। आज शहर में जो इने-गिने धनवान लोग हैं, उनमें से एक यह

भी है। पैसे का आधिक्य तथा संस्कृति का अभाव होने के कारण उसके सामने केवल एक ही लक्ष्य है, और वह है हर रोज एक नयी लड़की के साथ सोना। इसके लिए काफ़ी पैसा खर्च हो रहा है और इस पाप में मनोहर की मदद करने वाले साथी हैं घोष बाबू। उनका काम है लड़कियों को तैयार रखना। हाँ, वे स्वयं भी कुछ कम नहीं हैं। हर चीज़ की लज्ज़त पहले वे ही लेते हैं। और औरत तो कभी झूठी होती ही नहीं। माधवी, तुम सचमुच बहुत भाग्यवान् हो, वरना कई लड़कियों को तो भाग निकलने का मौक़ा ही नहीं मिला।"

माधवी अवाक् सुनती रही। उसके भावुक मन पर इन बातों से आघात हुआ। उसकी आँखें भर आईं।

"धत्, पगली! रो क्यों रही हो?"

माधवी ने मुँह छिपा लिया।

"माधवी, शांत हो जाओ। लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे?"

क्षण-भर कोई कुछ न बोला। पुष्पा ने और दो कप चाय मँगा ली। माधवी चुपचाप चाय पीने लगी। कुछ देर बाद माधवी ने पुष्पा की ओर देखा। वह भी गम्भीर थी।

"माधवी, क्या तुम्हें घोष बाबू से प्रेम हो गया है?"

माधवी ने कुछ उत्तर नहीं दिया।

"वह पशु है, माधवी! पैसे की खातिर दूसरों का मन कुचल देता है। उसके सामने हृदय का कोई मूल्य नहीं। तुम्हें उस पर तनिक भी विश्वास नहीं करना चाहिए, नहीं तो अवश्य धोखा खाओगी। यदि तुम्हारा मन न लगे तो मेरे पास आकर बैठ जाया करो। अब तुम उसके दफ्तर में मत जाना। कहीं और काम देख लो।"

माधवी भी यही सोच रही थी। थोड़ी देर में पुष्पा ने नौकर से समाचार-पत्र मँगा लिया और विज्ञापन देखने लगी।

माधवी जानती थी कि इतनी जल्दी काम मिलना असम्भव है। वह अपने भविष्य की चिन्ता से काँप रही थी।

"माधवी, तुम्हें शार्ट हैंड आता है न ?" पुष्पा ने उत्तेजित स्वर में पूछा।

"अब तो टाइपिंग भी भूल गई हूँ।" माधवी ने निराश स्वर में कहा।

लेकिन पुष्पा ने उसकी ओर ध्यान न दिया। उसने उसे एक विज्ञापन दिखाकर कहा, "आओ, चलकर देखते हैं।" बिल के पैसे देते हुए पुष्पा ने आगे कहा, "बड़े दफ़्तरों में काम करना अच्छा होता है। अगर तुम्हारी क़िस्मत अच्छी होगी तो अवश्य यह काम मिल जाएगा। प्रयत्न करना अपना कर्तव्य है।"

पुष्पा और माधवी जब के० बी० प्रॉडक्ट्स पहुँचीं, तब वहाँ काफ़ी भीड़ थी। कई लड़कियाँ अपने-अपने प्रमाण-पत्र लेकर और बड़ी सावधानी से मेकअप करके आयी थीं।

माधवी ने सोचा, भला मुझे यह नौकरी क्यों मिलने लगी। उसने पुष्पा से कहा, "चलो पुष्पा, इतनी भीड़ में क्या होगा ?"

लेकिन पुष्पा वहाँ के एक क्लर्क के साथ बातें करने लग गई थी। कुछ देर पश्चात् उसने माधवी से कहा, "माधवी, मुझे तो अब लौटना होगा, लेकिन तुम इन्टरव्यू दिये बिना मत आना। हो सका, तो मैं अभी इजाज़त लेकर आ जाऊँगी।"

माधवी वहीं बैठ गई। एक-एक उम्मीदवार अन्दर केबिन में जाती और शार्ट हैंड लेकर बाहर आ जाती। फिर वह टाइपराइटर के सामने बैठकर टाइप करती और क्लर्क को देकर अपना नाम और पता लिखाकर चली जाती।

पुष्पा लौटी नहीं। माधवी की निराशा पल-पल बढ़ती जा रही थी। वह वहाँ से भागकर घोष बाबू के पास जाना चाहती थी। लेकिन सोचती कि यदि वह घोष बाबू के दफ्तर चली गयी तो पुष्पा अवश्य रुष्ट होगी। लेकिन माधवी को घोष बाबू के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं था। वह उठ खड़ी हुई, लेकिन अभी दरवाज़े के बाहर पहुँची

भी न थी कि उसने पुष्पा को हाँफते हुए आते देखा। वह लज्जित हो लौट पड़ी।

पुष्पा उसके पास बैठकर देर से आने का कारण बताने लगी। माधवी अनमनी-सी सुनती रही।

कुछ ही देर में माधवी को बुलाया गया। माधवी भीतर गयी। उसका अन्दाज़ था कि वहाँ कोई अधेड़ गोल-मटोल सेठ होंगे, किन्तु बात इसके विपरीत थी। उस कुरसी पर बैठे हुए साहब तीस से कम आयु के थे और उनका चेहरा बड़ा ही आकर्षक था। माधवी ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया। उन्होंने उत्तर में मुस्करा दिया।

माधवी पेंसिल सँभालकर बैठ गई और उन्होंने एक पुराना अख़बार उठाकर डिक्टेशन देना आरम्भ किया। माधवी लिखने के लिए अभी झुकी ही थी कि अचानक सिर उठाकर कहा, "माफ़ कीजिए, आप कोई दूसरा पैसेज ले लीजिए।"

"क्यों ?" बड़े असमंजस में पड़कर उन्होंने पूछा।

"यह रिव्यू मेरा ही लिखा हुआ है और मैं इसे कई बार पढ़ चुकी हूँ।"

"अच्छा !" वे उस रिव्यू को बड़े ग़ौर से पढ़ने लगे। अन्त में माधवी की ओर देखकर बोले, "वेरी गुड।"

माधवी फिर पेंसिल संभाल बैठ गई।

"आप मराठी जानती हैं ?"

"जी हाँ। इसके अतिरिक्त गुजराती, उर्दू और बंगला भी जानती हूँ ?"

"वाह, आप तो लिंग्विस्ट मालूम देती हैं।"

माधवी मुस्कराकर चुप रह गई।

"आपका अनुभव कितना है ?"

"केवल छः महीने का।"

"हूँ !" फिर वे सोचने लगे।

"मिस माधवी, आप कितने वेतन पर काम कर सकती हैं ?"

"कम-से-कम डेढ़ सौ।"

"छः महीने के ही अनुभव से आप इतने अधिक वेतन की अपेक्षा तो नहीं कर सकतीं।"

"जो मैं छः महीने में सीख सकती हूँ, उसे अन्य लड़कियाँ साल-भर में भी नहीं सीख सकतीं।"

"यह बात है ?" कहकर वे कुछ हस पड़े। और फिर माधवी को उनके यहाँ किस प्रकार काम करना पड़ेगा, यह समझाने लगे। उनकी बातों ने माधवी की मानसिक अवस्था काफी सुधार दी।

अन्त में माधवी ने उनसे पूछा, "क्या मैं अपना लेखन जारी रख सकती हूँ ?"

"अवश्य ! हमारे काम में यदि दख़ल न हो तो आप अपना काम यहाँ पर भी कर सकती हैं।"

माधवी अत्यन्त प्रसन्न हुई। नमस्कार कहकर बाहर आ गई।

माधवी के आते ही क्लार्क भीतर गया। दो मिनट बाद उसने बाहर आकर कहा, "वाह, आपको तो बिना परीक्षा के ही काम मिल गया !"

माधवी ने मुस्कराकर उसे देखा और कहा, "तकदीर की बात है।"

"ठीक है, मैं आपका नियुक्ति-पत्र तैयार कर देता हूँ। सोमण साहब के हस्ताक्षर आप ही करवा लीजिए।"

माधवी पुष्पा से अपने इन्टरव्यू का वर्णन करने लगी। पुष्पा बड़े ग़ौर से सुन रही थी।

"देखा न, माधवी ! तुम तो आना ही नहीं चाहती थीं। किन्तु मैं जानती थी कि तुम्हें कहीं भी काम मिलने में कठिनाई नहीं होगी।"

"अच्छा-अच्छा ! अब तो तुम खुश हो न ?"

"अब एक बात और है।"

"क्या ?"

"उस घोष का मुँह मत देखना। यदि तुम उससे मिलने गई तो

मैं तुम्हें रजनी-जैसी ही समझूँगी।"

माधवी ने कुछ कहा नहीं। वह सोचने लगी—क्या रजनी ने जान-बूझकर उसका परिचय घोष बाबू से करवाया? अधिक सोचने का समय नहीं मिला। क्लार्क पत्र लेकर आ गया और माधवी उस पर हस्ताक्षर करवाने भीतर चली गई।

सोमगण साहब ने बड़े ग़ौर से पत्र पढ़ा। फिर कुछ सुधार करने के पश्चात् हस्ताक्षर कर दिए।

माधवी ने पत्र उठाकर उनकी ओर देखा, फिर नमस्कार कहकर बाहर चली आई।

७

नयी नौकरी के दौरान में माधवी मिस्टर थामस से न मिल सकी थी। उस दिन शनिवार था। थामस साहब की छुट्टी थी, फिर भी वे दफ़्तर आये हुए थे। उनका अनुमान ठीक था। माधवी दो बजे उनके दफ़्तर आ पहुँची।

"मुझे अफ़सोस है कि मैं उस दिन आ न सकी।"

"तो क्या फोन भी नहीं कर सकती थीं?"

"यह तो मेरी भूल हुई," माधवी अपना बैग रखकर यहाँ-वहाँ देखने लगी।

थामस साहब को उसके चेहरे पर अफ़सोस का कोई चिह्न दिखायी नहीं दिया, फिर भी वे हँसकर चुप रहे।

"माधवी, मैंने एक और पुस्तक तुम्हारे लिए रखी है। रिव्यू लिखकर दो-तीन दिन में दे देना।"

"दो-तीन दिन में तो संभव नहीं।"

"क्यों?"

"बात यह है कि मैंने नया जॉब ले लिया है। सवेरे साढ़े दस से लेकर साढ़े पाँच बजे तक दफ़्तर में रहना पड़ता है। इसके अलावा मेरा घर यहाँ से दूर है।"

"घोष बाबू का काम क्यों छोड़ दिया ?"

"यह मेरी निजी बात है," माधवी ने थामस साहब की ओर देखे बिना ही कहा।

"ओह, माफ़ करना माधवी ! मैंने अनजाने ही पूछ लिया। चलो, मैंने अभी खाना नहीं खाया। यह लो अपनी पुस्तक सँभाल लो।" थामस साहब ने पुस्तक माधवी को दे दी और उठ खड़े हुए।

माधवी उनसे पहले ही बाहर निकल चुकी थी।

थामस साहब खाना खा रहे थे। माधवी पुस्तक देख रही थी। शनिवार के दिन होटलों में भीड़ कम रहती है। दोनों निश्चिन्त थे।

यकायक थामस साहब ने कहा, "अरे, यह यहाँ क्या कर रहा है ?"

जिस व्यक्ति की ओर देखकर थामस साहब ने यह शब्द निकाले थे, वह भी अब उनकी ओर देख रहा था। थामस साहब ने उसे बुला लिया।

"वाह भई, मैं तो तुम्हारी प्रतीक्षा करते-करते थक गया !"

"क्या मतलब ? मैं तो यहाँ दो बजे से बैठा हूँ।"

"तो यहाँ बैठने को किसने कहा था ? मैंने तो तुम्हें अपने दफ़्तर आने को कहा था।"

"लेकिन मैंने सोचा, तुम यहाँ खाने अवश्य आओगे, फिर वहाँ तक चलने का कष्ट क्यों किया जाए ?"

"ग़जब के आलसी हो ! अच्छा, जाने दो, इनसे मिलो। आप हैं, मिस माधवी !"

"ओह, तो आप ही हैं माधवी !"

माधवी ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया। थामस साहब कह रहे थे, "आप हैं, अश्विन कुमार। बहुत बड़े कलाकार हैं, मॉडर्न आर्ट के भक्त !"

माधवी ने देखा, साफ़-सुथरे, सफ़ेद कपड़े पहने हुए अश्विन बाबू के बाल उनके कलाकार होने की गवाही दे रहे थे। बहुत काले तथा घने केश, शायद छः-आठ महीने से काटे नहीं गए थे। इतना ही नहीं, उनमें तेल भी नहीं लगाया गया था। हाथ में कुछ काग़ज़ और एक छोटी-सी पेंसिल। उन्होंने दुबारा माधवी की ओर नहीं देखा। कुछ लिखने लगे।

"आप आजकल क्या करते हैं ?" माधवी ने पूछा।

किन्तु अश्विन ने उत्तर नहीं दिया। माधवी को उस पागल कलाकार पर ग़ुस्सा आया। वह थामस साहब से कुछ कहने ही जा रही थी कि अश्विन बाबू कहने लगे, "मैं बेकार हूँ, इसीलिए मेरे सहृदय मित्र मेरा परिचय एक नामी कलाकार कहकर देते हैं।"

माधवी मुस्करा दी। उसका ग़ुस्सा अश्विन बाबू से नज़र मिलते ही लुप्त हो गया।

थामस साहब ने सबके लिए चाय मँगायी। किन्तु अश्विन ने कहा, "आज कॉफ़ी मँगाओ, यार !"

"क्यों ?"

"माधवी का रंग कॉफ़ी के रंग से मिलता है," अश्विन ने सहज भाव से कहा।

माधवी को अश्विन के कलाकार होने का विश्वास हो गया। उसने हँसकर कहा, "मँगाइए थामस साहब, मैं भी पी लूँगी।"

कॉफ़ी आ गई। माधवी और थामस साहब पीने लगे, किन्तु अश्विन अभी भी उस काग़ज़ पर झुका हुआ था।

"कॉफ़ी ठंडी हो रही है, अश्विन !" थामस साहब ने याद दिलाई।

उसी समय उन्होंने वह काग़ज़ थामस साहब को दिखाया। थामस साहब हँसने लगे। उन्होंने काग़ज़ माधवी को दिखाया। उस पर दो बड़ी-बड़ी आँखें बड़े ही सुन्दर ढंग से चित्रित थीं। माधवी समझ गई। उसकी आँखों की प्रशंसा हर जगह हुआ करती है। फिर अश्विन-जैसे कलाकार ने उन्हें रेखांकित किया तो इसमें ताज्जुब की कोई बात नहीं।

"एक कमी है इसमें, माधवी !" अश्विन बाबू ने कहा ।

"वह क्या ?" माधवी ने उत्सुक होकर पूछा ।

"तुम बता सकोगे थामस ?"

"काजल की," थामस साहब ने मुस्कराते हुए कहा ।

"बिलकुल ठीक," अश्विन बाबू ने मेज़ पर इतने ज़ोर से हाथ मारकर कहा कि सब लोग मुड़कर उनकी ओर देखने लगे । माधवी की छाती में कुछ धक्-से हो गया ।

"यह क्या, अश्विन ? टेबल का काँच टूट जाएगा ।"

अश्विन बाबू कॉफ़ी पीने लगे । थामस साहब ने माधवी से पूछा, "अब क्या प्रोग्राम है ?"

"कुछ नहीं ।"

"तो चलो, पिक्चर देखने चलें ।"

"चलिए ।"

"तुम भी चलोगे, अश्विन ?"

"नहीं, मुझे एक आवश्यक काम से जाना है ।"

"कल कर लीजिएगा आप अपना आवश्यक काम, आज हमारे साथ आइए ।"

अश्विन का कलाकार इन्कार न कर सका ।

८

के० बी० प्रोडक्ट्स में माधवी ने एक पखवारे के भीतर-भीतर जो प्रगति की, उसे देखकर सोमरण साहब अपनी पसन्द पर बड़े ही प्रसन्न हुए । माधवी के आते ही उन्हें एक सरकारी ठेका मिल गया था । इसी कारण उन्होंने माधवी की नियुक्ति शुभ समझी ।

माधवी अपने स्वभावानुसार सभी लोगों से मिल-जुलकर रहती। अपना काम खत्म होने पर कभी वह दयाभाई क्लार्क की मदद करती, कभी एकाउन्टेन्ट साहब के पास जाकर बैठती और कभी चपरासी से बातें करने लग जाती।

उस दिन माधवी दफ़्तर जा रही थी, तो रह-रहकर दो बातें उसे याद आ रही थीं—अश्विन बाबू और काजल। अश्विन बाबू का माधवी पर बड़ा ही गहरा प्रभाव पड़ा था। उसने आधुनिक कला का अध्ययन करने का निश्चय कर लिया था। वह सोचने लगी—कॉफ़ी के रंग से उसके रंग की तुलना कितनी साधारण बात थी! फिर भी जीवन-भर, जब भी कॉफ़ी उसके सामने आएगी, वह बात उसे अवश्य याद आएगी। थामस साहब का कहना है कि रचनात्मक कलाकार साधारण चीज़ों में भी सौंदर्य देखते हैं। अश्विन कलाकार है—सच्चा कलाकार, उच्चकोटि का कलाकार! क्या मैं भी कभी कुछ बन सकूंगी? थामस साहब कहते हैं कि मुझमें साहित्य भरा हुआ है। बस, केवल प्रयत्न करने-भर की देर है। असंभव! यदि मैं इस संसार का सौंदर्य देख पाती तो घोष बाबू के जाल में कभी न फँसती। आज मैं बदनाम हूँ। घरवाले मेरी व्यथा नहीं जान सकते, उनको मुझसे प्रेम नहीं। बाहर प्रेम खोज रही हूँ, क्या पा सकूँगी? भगवान् जाने!

सामने से एक गाड़ी आ रही थी। माधवी रास्ते से हटकर फ़ुटपाथ की ओर जाने लगी, तो गाडी भी उसी दिशा में मुड़ गई। माधवी ने नज़र उठाकर देखा, उफ़, यह तो सोमरण साहब हैं! माधवी को हँसी आ गई। वे नित्य की अपेक्षा अधिक प्रसन्न दिखायी दे रहे थे। उन्होंने कुछ ऊँची आवाज़ में कहा, "हलो, माधवी!"

"किन विचारों में डूबी हुई थीं, माधवी? आर यु इन लव?"

"छीः!" माधवी ने झूठे रोष से कहा।

सोमरण साहब गाडी छोडकर माधवी के साथ सीढ़ियाँ चढ़ने लगे। वे गुनगुना रहे थे, "बिसरलास तू सहज मला रे…"

माधवी ने उनकी ओर देखा और हँसकर चुप हो गई।

"जानती हो यह गीत ?"

"जी हाँ, सुना तो है।"

"आगे भी सुनो," वे कुछ सुर में कुछ बेसुरे गाते रहे।

माधवी शरमा रही थी, कुछ डर भी रही थी, किन्तु सोमण साहब गुनगुनाते ही रहे।

सोमण साहब की यह हालत देखकर दयाभाई और एकाउन्टेन्ट आपस में कुछ फुसफुसाकर हँसने लगे। माधवी कुछ समझी नहीं। जब उसने दयाभाई से पूछा, तब उन्होंने कहा, "आज सोमण साहब पीकर आये हैं।"

माधवी दंग रह गई। दूसरे ही क्षण सोमण साहब बाहर आ गए। उन्होंने दयाभाई से कुछ फ़ाइलें माँगीं और माधवी के पास आकर बैठ गए। माधवी चुपचाप नोट लेने लगी। वे अपने होश में थे। आध घंटे तक वे काम देते रहे और उसके बाद फिर वही, "बिसरलास तू सहज मला रे !"

माधवी खिलखिलाकर हँसने लगी।

"हँसती क्यों हो ? क्या मैं सुर में नहीं हूँ ?"

"वाह ! यह कौन कह सकता है ?" माधवी हँसी रोकते हुए कहने लगी।

"अच्छा, अब मैं जा रहा हूँ। तुम इन पत्रों पर हस्ताक्षर करके भेज देना। आज मैं एक नयी दुनिया में हूँ, माधवी—ऐसी दुनिया में, जहाँ हर सुन्दर चीज़ कहीं अधिक सुन्दर लगने लगती है।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि आज तुम्हारी आँखें रोज़ की अपेक्षा अधिक विशाल लग रही हैं।"

माधवी के तो जैसे दिल की धड़कन ही बन्द हो गई। यह भी खूब रही ! जहाँ देखो वहाँ कलाकार-ही-कलाकार हैं। उसने विषय बदलकर कहा, "यह पत्र आपकी मेज़ पर छोड़ जाऊँगी।"

सोमण साहब हँसे और गुनगुनाते हुए वहाँ से चले गये।

दयाभाई ने माधवी से कहा, "माधवी बेन, यह काम आप कल कर लीजिएगा।"

"क्यों ?"

"क्योंकि सोमण साहब कल इन पत्रों को देखते ही फाड़ देंगे।"

"अच्छा !" माधवी हँसने लगी। वह भी गुनगुनाने लगी, "बिसर-लास तू सहज मला रे !"

सोमण साहब के कमरे में फोन की घंटी बज उठी। दयाभाई काम में थे। माधवी ने जाकर फोन उठा लिया।

"हलो !"

"हलो ! माधवी तुम ? पहचाना मुझे ? मैं हूँ, माधवी ! कुछ तो बोलो !"

माधवी ने पहचान लिया, घोष बाबू थे। वही आवाज़, वही ढंग, वही चिर-परिचित घोष बाबू ! वह वर्फ़ के समान जम गई, किन्तु घोष बाबू की आवाज में माधवी को पिघलाने की उष्णता थी।

घोष बाबू कह रहे थे, "मैं हैरान हूँ कि तुमने भूलकर भी मुझे याद नहीं किया। नारी होकर तुमने इतना सख्त दिल कैसे पाया ? यहाँ की हर जगह मुझे तुम्हारी याद दिलाती है। मैं बेहद परेशान हूँ, माधवी ! लेकिन तुम ? तुम प्रसन्न हो, यहाँ-वहाँ जाती हो, पिक्चरें देखती हो। खैर, कोई बात नहीं। पर माधवी, एक बार मुझसे मिलो तो ! मैं बहुत ही बेचैन हूँ, एक बार तुम्हें देखने-भर के लिए, केवल एक बार !"

"माफ़ कीजिए, घोष बाबू, इस समय मैं काम में हूँ।"

"तुम चाहो तो मृत्यु को भी रोक सकती हो, प्रिये ! मैं उस पवित्र स्थान पर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जहाँ प्रथम बार मैंने तुम्हारा हाथ अपने हाथ में लिया था। कहो माधवी, आ रही हो न ? टैक्सी लेकर आ जाओ, समय नष्ट मत करो, माधवी !"

अब तक माधवी सँभल चुकी थी। उसने कहा, "नहीं, मैं नहीं आ

सकती। आपसे मिलने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है।" और माधवी ने फोन बन्द कर दिया।

किन्तु घोष बाबू तुले हुए थे। उन्होंने फिर नम्बर जोड़ लिया।

माधवी के हृदय का वह कक्ष, जहाँ घोष बाबू की स्मृति को उसने दफ़नाया था, पल-पल ज़ोर लगाकर खुल जाने को उतावला हो रहा था। घोष बाबू बीती बातें याद दिलाते जाते थे और माधवी का संयम धीरे-धीरे टूटता जा रहा था। दयाभाई की आहट पाते ही, "अभी आ रही हूँ," कहकर उसने फोन बन्द कर दिया।

"आपका फोन था, माधवी बेन ?"

"जी हाँ," उनकी ओर देखे बिना ही उसने उत्तर दिया।

दयाभाई जाकर अपने काम में जुट गए। माधवी ने अपना बैग उठाकर सोमण साहब की पंक्ति को पूरा किया, "विसरू कशी मी सख्या तुला।"

६

रात्रि के दस बज रहे थे। माधवी अपने घर के सामने ही घोष बाबू की गाड़ी से उतरकर सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। उसके पीछे-पीछे उसके पिता भी थे। उसने मुड़कर नहीं देखा। वह जानती थी कि उसके पिता उसे देखने के लिए नीचे खड़े थे।

"माधवी !" पिता ने गरजकर कहा, "तुम्हारी हिम्मत बहुत बढ़ गई है ! तुम हम सबके मुँह पर कालिख लगा रही हो !"

माधवी चुपचाप बैठी रही। उसकी चुप्पी ने पिता का क्रोध तीव्रतर कर दिया। फिर गरजकर उन्होंने पूछा, "तुम घूमना-फिरना बन्द करोगी या नहीं ? हर रोज़ दस बजे तक कहाँ रहती हो ? कल से तुम घर से बाहर क़दम भी नहीं रखोगी, समझीं ?"

माधवी ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसकी माता कोने में बैठी रो रही थी। छोटा भाई पलंग पर लेटे-लेटे छत ताक रहा था।

"तुम्हें मंजूर है या नहीं ? कल से बाहर नहीं जा पाओगी ! जवाब दो !"

"दफ्तर मैं जाऊँगी," माधवी ने कहा, हालाँकि उसने के० बी० प्रॉडक्ट्स का काम गत एक पखवारे से छोड़ दिया था। माधवी के पिता अपने-आपको न रोक सके। उन्होंने के० बी० प्रॉडक्ट्स में फोन करके पता लगा लिया था। उन्होंने लपककर जूता उठाया और माधवी को पीटने लगे। माधवी ने अपने-आपको बचाने के लिए मुँह ढक लिया। माँ तथा भाई ने पिता को शांत किया।

घोष बाबू के सहवास में माधवी ने अपना सब-कुछ लुटा दिया। उसने काम छोड़ दिया, पुष्पा-जैसी सहेली से नाता तोड़ लिया और अच्छे-भले घर को झगड़ों से अशान्त कर दिया। घोष बाबू के साथ वह किसी होटल में या समुद्र-किनारे बैठी रहती। उनसे अलग होना उसके लिए असम्भव-सा हो गया था। घोष बाबू की चिकनी बातों के कारण वह उन्हें देवता-समान मानने लगी। उसने कई बार अपने घरवालों की आपत्ति के बारे में उनसे बताया था, किन्तु दस बजने पर भी वे माधवी से अलग होने को तैयार न होते। रात होते ही जब वह घर जाने का प्रस्ताव सामने लाती, तो घोष बाबू कहते, "काश, माधवी, हमें कभी अलग न होना पड़ता !" और माधवी भी उस दिन का स्वप्न देखने लग जाती, जब उसे संसार की कोई भी शक्ति उनसे अलग करने का साहस न कर पाएगी।

आज इन झगड़ों का रूप कुछ अधिक विकराल रहा। माधवी अपने पिता की बहुत ही लाडली थी। बचपन में जिस माधवी को उन्होंने भूल-कर भी न डाँटा था, आज उसे जूते से पीटा, वैरी की तरह पीटा। अपनी सारी शक्ति लगाकर न जाने एक-एक कर उन्होंने कितने जूते लगाए।

और माधवी ? उसकी आँखों में पानी तक नहीं आया। उस मानिनी

ने अपने मुँह से कोई शिकायत तक न की। वहीं बैठी रही, बड़ी देर तक बैठी रही।

उस रात किसी को नींद नहीं आई। माधवी उन्हीं कपड़ों में लेट गई। रात-भर करवटें बदलती रही। मस्तिष्क में विचारों के बड़े-बड़े चक्र घूम रहे थे। अन्त में थके मन ने हार मान ली। विचार-चक्रों की गति धीमी पड़ गई। निद्रादेवी ने उन्हें अधिक सुन्दर बनाकर सपनों में परिणत कर दिया।

१०

माधवी ज़िद्दी थी। दूसरे दिन अपने नित्य क्रमानुसार नहा-धोकर, कपड़े पहन वह घर से बाहर निकली। उसके पिता घर पर नहीं थे। माँ ने बाहर आकर दीन आवाज़ में पूछा, "आज जल्दी आओगी न, मधु ?"

माधवी ने कुछ नहीं कहा, चुपचाप चली गई। माँ ने अपने आँसू पोंछ लिये। उसे डर था, माधवी आज जान-बूझकर देर से आएगी। वह उसके स्वभाव से पूर्णतः परिचित थी। किन्तु बेचारी माँ यह नहीं जानती थी कि बचपन की मधु और यौवन-भरी माधवी में कितना अन्तर है ! उस मधु का रोष मिठाई देखते ही कोसों दूर भागता, इस माधवी का अहं बदला लेने पर उतारू था।

दिन-भर माँ ने काम नहीं किया। घर में इधर-उधर घूमती रही। खाना ठीक नहीं बना। राज सबेरे ही कहीं चला गया था, उसकी चिन्ता अलग से खाए जा रही थी। राज कुछ कहता नहीं, फिर भी सब-कुछ समझता है। उसे माधवी से कितना प्यार है, यह माधवी भी जानती है।

और माधवी के पिता ? एक कोने में सुन्न-से बैठे हुए थे। जाने कैसा बवंडर उठा हुआ था उनके मन में। बार-बार वे अपने को कोसते, क्यों

मैंने हाथ उठाया ? अपनी जवान लड़की पर क्यों ऐसा जुल्म किया ?... उन्हें अपनी बहन की याद आई। उसे भी किसी से प्रेम हो गया था। वह माधवी से भी अधिक निडर थी। आखिर घरवालों ने उसका विवाह कर दिया था। साल-भर बाद वह मर गई। प्रेम करना क्या पाप है ? लेकिन माधवी ने मुझसे क्यों छिपाया ? सारे पड़ोस के लोग हँसते हैं। पड़ोसियों के विचार से माधवी के पिता और भी उद्विग्न हो उठे। परसों देशपांडे की पत्नी पूछ रही थी, "आजकल माधवी कहाँ काम करती है ?" और जवाब सुने बिना ही एक कुटिल हँसी हँसने लगी थी। उनकी लड़की भी काम करती है, किन्तु छः बजे ही घर पर आ जाती है। इसीलिए उन्हें ताने देने का मौक़ा मिला था।

माधवी की माँ सोच रही थी, जूते से मारकर इन्होंने अच्छा तमाशा खड़ा किया। एक तो हमारे कारण उसे दूसरों की नौकरी करनी पड़ती है, ऊपर से हमीं उसे पीटें। हाय, मैंने क्यों उसे गले नहीं लगा लिया ? किसे सुनायेगी वह अपना दुख ? वह तो किसी को अपने घर की बात बतायेगी नहीं। एक नम्बर की ज़िद्दिन है, प्यार से ही मानेगी। आजकल बेचारी के नसीब में झगड़े ही लिखे हैं। और कल तो ग़ज़ब ही हो गया। इतनी ऊँची आवाज़ निकालकर इन्होंने पड़ोसियों को खुश किया।

और राज ? वह अकेला ही गलियों में घूम रहा था। अपने साथियों से मिलने में डरता था, मानो सभी ने कल की घटना देखी हो। घूमते-घूमते वह समुद्र-किनारे पहुँचा। इस जगह कई बार वह अपनी बहन के साथ आ चुका था। माधवी उससे काफ़ी बड़ी थी। कहानियाँ सुनाने में चतुर माधवी राज को मिनटों में इतिहास के पाठ पढ़ा जाती।...माधवी इतनी समझदार है, फिर उसे यह क्या हो गया है ? उसका बाल-मन विचारों के इतने भारी बोझ को उठा न पा रहा था। वह वहाँ से मुड़कर घर की ओर चल पड़ा।

रात के दस बज गए, ग्यारह बज गए, बारह बज गए, माधवी नहीं आयी। घर शान्त था। कोई कुछ कह नहीं रहा था। कहने लायक़ कुछ

था ही नहीं। माधवी के न लौटने की शंका किसी को भी नहीं थी। चूल्हा ठंडा हो चुका था, रोटियाँ उससे पहले ही। कोई अपनी जगह से उठने को तैयार न था।···दो बज गए। माँ ने राज को बुलाया। राज भीतर गया। माँ ने कहा, "भूख नहीं लगी ?"

राज ने सिर हिला दिया।

"तो बिस्तर लगाकर सो जाओ," और वह खुद अपने पति के लिए बिस्तर बिछाने लगी।

माधवी के पिता बूढ़े हो गए थे, किन्तु आज-जितनी थकावट उन्होंने कभी अनुभव नहीं की थी। माधवी उनके बुढ़ापे की लाठी थी, आज वे उसे खो बैठे थे। उन्हें माधवी पर जो नाज़ था, आज वह चकनाचूर हो गया था। अपने सिद्धान्तों पर मर मिटने वाली उनकी माधवी आज उनकी नज़र में ही गिर चुकी थी। लड़की के लिए केवल पिता और पति का घर जायज़ है, दूसरा घर चकले-समान है। उन्हें रह-रहकर एक अजीब बेचैनी-सी हो रही थी, जो उन्हें एक जगह बैठने नहीं देती थी। सोच-सोचकर उनका बूढ़ा मन थक गया था। जाकर वे बिस्तर पर लेट गए।

राज भी सो गया। और माँ को भी नींद ने सोने को विवश कर दिया।

११

माधवी अब वार्डन रोड पर रहने लगी। घोष बाबू ने उसे किसी चीज़ की कमी न होने दी। उन्होंने एक ईसाई परिवार में एक कमरा ले लिया था। कमरे में सामान भी काफ़ी अच्छा था। एक कोने में मेज़ पर छोटा-सा स्टोव था, जिस पर चाय बनाने का सामान रखा था। सुबह-शाम घूमने का कार्यक्रम रहता था। दोपहर में सिनेमा, रात को बोटिंग। और क्या चाहिए था ? माधवी अपने घर

को भूल गई। घोष बाबू उसे घर की याद न आने देते। कई बार माधवी से पूछकर घोष बाबू मनोहर को ले आए थे। माधवी को मनोहर को नजदीक से देखने का अवसर अब मिलता था। इतना बुरा तो वह नहीं था, जितना माधवी ने उसे समझा था।

धीरे-धीरे मनोहर ने माधवी के घर नियमित रूप से आना आरंभ किया। घोष बाबू जानकर भी अनजान बनते। माधवी ने भी इसमें कोई बुराई नहीं देखी।

एक दिन सवेरे ही मनोहर आ गया। माधवी ने उसके लिए चाय बनायी। दोनों ने मजे से चाय पी और यहाँ-वहाँ की बातें करते रहे। अन्त में मनोहर ने हिम्मत बटोरकर पूछा, "आज मेरे क्लब चलोगी, माधवी ?"

"वहाँ क्या है ?"

"बहुत-कुछ है। तुम्हें क्या पसंद है ? तैरना आता है ?"

"तैरना ? नहीं, तैरना तो नहीं आता, लेकिन पसन्द बहुत है।"

मनोहर खुश होकर खड़ा हो गया। उसने कहा, "वह काम मेरा है। तीन दिन में तुम्हें तैरना सिखा दूंगा। जल्दी तैयार हो जाओ, मैं गाड़ी लेकर आता हूँ।"

"कहाँ है आपकी गाड़ी ?"

"ज़रा दूर छोड़कर आया था। कोई पहचान वाले देख लेंगे, तो घर पर समाचार पहुँच जाएगा।" इतना कहकर मनोहर चला गया।

"ओह ! माधवी को समझते देर न लगी। मनोहर जैसा अमीर तथा सम्मानित व्यक्ति उसे मिलने दुनिया से छिपकर ही आ सकता है।

उसे आत्मग्लानि हुई। वह कहाँ-से-कहाँ पहुँच चुकी थी ! उसने निश्चय किया कि वह मनोहर के साथ क्लब नहीं जाएगी। जो व्यक्ति उसके पास खुलकर नहीं आ सकता, उसके साथ वह भी नहीं जाएगी। उसने उठकर कमरा बन्द किया और मनोहर से बचने के लिए नीचे उतर गई। किन्तु मनोहर गाड़ी लेकर आ गया था। उसने गाड़ी का दरवाजा

खोल दिया और माधवी कुछ कहने में असमर्थ रही। गाड़ी तेज़ रफ़्तार से दौड़ने लगी। माधवी मुँह बनाकर बैठी रही। मनोहर ने भी कोई बातचीत करना उचित नहीं समझा।

क्लब पहुँचते ही माधवी को उसने नहाने के कपड़े दिलाए। माधवी सकुचायी हुई उसके साथ पानी की ओर बढ़ने लगी। पानी का नीला रंग देखकर माधवी आनंद-विभोर हो गई। मनोहर ने उसका हाथ पकड़ लिया और दोनों पानी में उतर गए। अब तक माधवी का मूड ठीक हो गया था। मनोहर जैसे कहता, वैसे ही वह हाथ चलाने का अभ्यास करने लगी। मनोहर रह-रहकर उसे देख रहा था। उसकी मेह-नत बहुत दिन बाद आज सफल हुई थी। आज माधवी को भी मनोहर से किसी प्रकार का परहेज़ नहीं था। किन्तु माधवी के विचारों में कोई परिवर्तन नहीं आया था।

भोजन करते समय माधवी और मनोहर कमरे में अकेले थे। माधवी यहाँ-वहाँ की बातें कर रही थी, किन्तु मनोहर मन-ही-मन माधवी से जो बातें कहनी थीं, उसका पूर्वाभ्यास कर रहा था। भोजन समाप्त होते ही नौकर ने आकर मेज पर कॉफ़ी रख दी। दोनों पीने लगे। अपना कप उठाकर मनोहर माधवी के क़रीब आ बैठा, लेकिन माधवी ने उधर कोई ध्यान नहीं दिया। मनोहर ने उसका हाथ पकड़ा, तो उसने एक झटके में अपना हाथ छुड़ा लिया।

"ऐसा मत करो, माधवी!" मनोहर के स्वर में विनय नाम-मात्र को भी न था।

माधवी का नशा टूट गया। वह समझ गई कि इस प्रोग्राम के पीछे मनोहर ने उसके लिए जाल बिछाया है। उसने सौम्य स्वर में कहा, "मनोहर बाबू, मैं आपको अपमानित नहीं करना चाहती, किन्तु आप ऐसी हरकत न करें।"

"माधवी, मैंने आज तक किस प्रकार दिन काटे हैं, यह मैं ही जानता हूँ। तुम्हें स्वप्न में भी इसकी कल्पना न होगी कि मैं दिन-रात तुम्हारे

बारे में सोचता रहा हूँ।"

"मनोहर बाबू, घर चलिए।"

"नहीं माधवी, यह घर जाने का समय नहीं है, यह तो स्वर्ग पहुँचने का समय है।"

माधवी उठकर दरवाज़े की ओर जाने लगी, तो मनोहर ने लपककर दरवाज़ा बन्द कर दिया। अब माधवी भय से आतंकित हो गई। फिर भी हिम्मत न हार वह एक बड़े सोफ़े के पीछे हो गई। अब मनोहर ने अनुनय करना छोड़ माधवी को ज़ोर से पकड़ लिया। उसका हाथ उसके ब्लाउज़ की ओर बढ़ा, तो माधवी ज़ोर से चीख़ उठी।

बैरा दौड़ते हुए आ दरवाज़ा खटखटाने लगा। माधवी ने दरवाज़ा खोल दिया। मनोहर सिगरेट सुलगाने लगा और माधवी ने अपना बैग उठाया। दोनों गाड़ी के पास आए। माधवी ने मुड़कर देखा, वह बूढ़ा बैरा अभी भी वहीं खड़ा था। उसे अपने पिता याद आए। उसी समय एक टैक्सी उसे दिखायी दी और वह दौड़कर उसमें बैठ गई।

आँसू पोंछती हुई माधवी घर पहुँची।

१२

घोष बाबू की चिन्ता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। उनकी सारी योजनाएँ माधवी के कारण मिट्टी में मिल रही थीं। यदि मनोहर माधवी से प्रसन्न रहता, तो वह उसका सारा खर्च उठा लेता। किन्तु अब वह एक कौड़ी भी न देगा। उसे तो अब माधवी से नफ़रत हो चुकी है। घोष बाबू की व्यवसायी बुद्धि एक ही बात समझ सकती थी कि माधवी उनके हाथ रहे और उसका खर्च कोई और ढोए। इस तरह उन्हें भी जीवन में केलि करने का अवसर मिलता। वे पैसा खर्च करने को हरगिज़ तैयार न थे।

उन्होंने माधवी को बड़े प्यार से पुचकारकर उसे नौकरी न करने के लिए मनाया था। वे जानते थे कि माधवी के पास पैसे हों तो उसे स्वतन्त्र होने में विलम्ब नहीं लगेगा। उसके पास वे पैसे नहीं रहने देते थे, ताकि वह अपने से एक क़दम भी इधर-उधर न जा सके।

किन्तु यह सब पर्याप्त न था। उन्हें एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी, जो माधवी के खर्चे-पानी को निभा ले।···थामस, हाँ, थामस। लेकिन थामस जैसे विद्वान् के सामने उनका यह प्रस्ताव महाकुरूप लगा। इसीलिए उन्होंने एक नयी चाल सोच निकाली। थामस के पास मनोहर जितना धन न सही, किन्तु पैसे की कोई कमी नहीं थी। कई बार उन्होंने यह माना था कि माधवी उनकी प्रेरणा है।

घोष बाबू फोन मिलाकर थामस साहब से यहाँ-वहाँ की बातें करने लगे। अन्त में मुख्य विषय पर आते हुए उन्होंने कहा, "भई, तुम तो माधवी को भूल ही गए।"

"मैं कैसे भूल सकता हूँ? वही आजकल नहीं आती।"

"वह मुझसे कह रही थी कि तुमसे मिलना चाहती है।"

"अच्छा?" थामस साहब अपने स्वर में आनन्द न छिपा सके।

"तो पता नोट कर लो, जब समय मिले, चले जाना।"

"समय तो मुझे नहीं मिलता, किन्तु जब माधवी ने याद किया है, तो आज ही जाऊँगा। किस समय मिलेगी वह?"

"शाम को तो शायद वह पिक्चर जा रही है। किसी और वक्त सम्भव होगा।"

"तो मैं कल चला जाऊँगा।"

"देख लो, तुम जैसा उचित समझो। वैसे रात्रि का समय भी कुछ बुरा नहीं है। मैं भी वहीं रहूँगा।"

"तो मैं आ जाऊँगा।" थामस साहब ने उत्तर दिया और फोन बन्द कर दिया।

उस दिन शाम को घोष बाबू माधवी को सिनेमा दिखाने ले गए।

उसे प्रसन्न करने के लिए उन्होंने एक साड़ी भी ख़रीद दी ।

रात को सिनेमा से बाहर आते समय माधवी ने अश्विन को देखा। माधवी उनसे बातें करने लग गई। घोष बाबू पीछे रह गए थे। जब उन्होंने माधवी को अश्विन से हँस-हँसकर बातें करते हुए देखा तो उनके तन में आग लग गई। उन्होंने उसका हाथ खींचा। माधवी कुछ कह न सकी। वह अनमनी-सी उनके साथ हो ली। उनके इस असभ्य बरताव से वह खीझ उठी थी।

"आखिर ऐसी क्या जल्दी थी ?" माधवी ने कहा।

"उस कार्टूनिस्ट से कौनसी बातें करनी आवश्यक थीं ?"

"कोई परिचित मिले तो बात भी न करूँ क्या ?"

"नहीं, कोई ज़रूरत नहीं।"

माधवी ग़ुस्सा पी न सकी। वह वहीं रुक गई। घोष बाबू ने उसका हाथ पकड़कर खींचा। वह गिरते-गिरते बची और फिर घोष बाबू के साथ चलने लगी। आखिर रात के समय वह कर भी क्या सकती थी ?

माधवी को उसके कमरे में छोड़कर घोष बाबू चले गए। माधवी तकिये में मुँह छिपाकर रोने लगी। बहुत देर रोने पर भी वह शान्त न हो सकी। दो महीने बाद प्रथम बार माधवी को अपने घर की याद आई थी। आज दिन-भर उसने कुछ खाया नहीं था। बचपन से ही उसकी आदत थी कि वह रूठने पर भोजन नहीं करती थी। जाकर लेट जाती। फिर उसकी माँ उसे मनाकर खाना खिलाती। लेकिन आज उसे मनाने को वहाँ कोई न था। वह माँ को याद कर फूट-फूटकर रोने लगी। उसने सोचा, घर लौट जाए।

इस विचार ने माधवी के आँसू सुखा दिए। वह उठ खड़ी हुई। अपने कपड़े बटोरकर बक्स में भरे और दूसरी चीज़ें भी इकट्ठी कीं। फिर मुँह धोकर वह अपने बाल सँवारने लगी···उसका मन माटुंगा स्टेशन से निकलकर अपने घर के नीचे जा पहुँचा था। घर में अभी तक रोशनी थी। वह सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। एक-दो-तीन···हाँ, ग्यारह ही तो हैं। फिर दो

घर लाँघकर वह अपने घर के सामने आ गई। दरवाज़ा बन्द था। उसने काँपते हाथों से खटखटाया।···पल-भर में दरवाज़ा खुल जाएगा। मन एक क्षण को काँप-सा उठा।···आखिर दरवाज़ा खुल गया। उसने तीनों की ओर देखा। उनके चेहरे पर आतंक था, भय था, मानो उन्होंने अपनी लड़की का भूत देखा हो। प्रसन्नता नाम-मात्र को भी न थी। तीनों के चेहरे पर एक ही भाव था—अब किसलिए आयी हो? आवाज़ केवल माँ की सुनायी दी। वह बुदबुदायी, तुम्हारे कारण हम कहीं के न रहे। पिता ज़ार-ज़ार रो रहे थे। फिर भाई ने दरवाज़ा धीरे से बन्द कर दिया, जैसे जताया हो कि हम मजबूर हैं, हमें समाज का डर है।···

माधवी बिलख उठी। डूबते के हाथ से तिनका भी छूट गया था।

ठीक उसी समय थामस साहब ने माधवी को पुकारा, "कौन है?"

"मैं हूँ, माधवी।"

माधवी ने दरवाज़ा खोल दिया। थामस साहब भीतर आकर बैठ गए। उनका इतनी रात गये आना माधवी को बुरा लगा। घोष बाबू को वहाँ न देखकर थामस साहब भी झेंप गए।

"कहिए," माधवी ने रूखे स्वर में पूछा।

"मैं···मुझे घोष बाबू ने कहा था कि तुमने मुझे याद किया है। सो, देखने आया कि क्या बात है।"

"किन्तु आप इतनी रात गये क्यों आये? आप जानते हैं कि मैं अकेली इस कमरे में रहती हूँ और वह भी एक परिवार के साथ।"

"घोष बाबू ने कहा था कि वे भी यहाँ होंगे। इसीलिए मैं आया, वरना मैं कभी तुम्हें कष्ट न देता।"

कुछ देर के लिए कमरे में सन्नाटा छा गया।

"माधवी!"

"क्या?"

"यह अकेलापन तुम्हें भाता है?"

"क्यों?"

"नारी का अकेले रहना कितना अस्वाभाविक लगता है ! फिर तुम जैसी लड़की, जो दिन-भर बातें करते थकती न हो !"

माधवी की आँख भर आना चाहती थी, किन्तु उसने अपने को सँभाले रखा। वह चुप रही।

"अच्छा, मैं जा रहा हूँ, माधवी !"

माधवी उठ खड़ी हुई और बढ़कर दरवाजा खोल दिया। थामस साहब ने धीरे से माधवी का हाथ पकड़ लिया। लेकिन उसने हाथ खींच लिया।

"माधवी !"

"इस समय आप चले जाइए, वरना लड़ाई हो जाएगी।"

"नहीं, माधवी, मैं जा रहा हूँ। मैं तुम्हारा मित्र बनना चाहता हूँ। जब भी कोई आवश्यकता हो आजमाना।"

माधवी ने कुछ नहीं कहा और न आँख उठाकर ही उनकी ओर देखा।

थामस साहब चले गये। दरवाजा बन्द करते समय माधवी ने देखा, भीतर से वह ईसाई औरत झाँक रही थी।

१३

"ए लड़की, ! इधर आओ।"

माधवी ने मुड़कर देखा। वह ईसाई औरत बुला रही थी। माधवी को उसकी अशिष्ट भाषा बुरी लगी। वह वहीं खड़ी रही।

"इधर आओ, मैन, इधर !"

"क्या बात है ?" माधवी ने दूर से ही पूछा।

"तुम्हारा आदमी कब आयेगा ?"

"पता नहीं।"

"तो पैसा कौन देगा ?"

"कैसा पैसा ?"

"यह मकान क्या तुम्हारे बाप का है ? किराया कौन देगा ?"

माधवी ने आव देखा न ताव, खींचकर एक तमाचा उसके काले गाल पर जमा दिया। इस पर वह भी चुप न रही, उसने माधवी के बाल पकड़ लिए। दोनों जमकर लड़ने लगीं। दोनों को बड़ी कठिनाई से अलग किया गया, किन्तु उस औरत का मुँह कोई रोक न सका। माधवी गाली बकना न जानती थी, चुप रही।

"रखैल कहीं की ! अपने यार की तरफ़दारी करती है। मालूम नहीं, बोलती है ! इसके दादा ने यह घर बना के रखा है इसके लिए।"

"चुप रह, नालायक ! मैं तो रखैल हूँ, पर तू तो मुझसे भी बुरी है, जो मुझे पैसे के लिए यहाँ रहने देती है।"

"पैसे ! पैसे ! हैं कहाँ तेरे पैसे ?" वह और भी अनाप-शनाप बकने लगी। उसका पति माधवी के पास आकर कहने लगा, "देखो, तुम आज ही किराया दे दो। अब डेढ़ महीना हो गया है।"

"मुझे कब इन्कार है ? मैं आज ही आपका किराया देकर कमरा खाली कर दूँगी। मुझे तो पता भी नहीं था कि आपका किराया अभी तक नहीं दिया गया है।"

"ठीक है। अब आप जाइए, वरना तमाशबीनों के लिए अच्छा तमाशा खड़ा हो जाएगा।"

माधवी अपने कमरे में चली आई। जैसे-तैसे तैयार होकर वह बस के लिए पैसे ढूंढ़ने लगी। अपने बैग में देखा, बक्स में देखा, लेकिन अफ़-सोस ! एक पैसा भी कहीं दिखायी नहीं दिया। वह नीचे फोन करने दौड़ी। दूर से ही उसने फोन के पास रखी हुई 'प्रेम की सूचना' तथा पैसों के लिए रखा हुआ छोटा बक्स देखा। वह उलटे पाँव लौट आई। देर तक कमरे में वह भूखी शेरनी की तरह घूमती रही और सोचती रही। उसका सारा शरीर जल रहा था। आज वह मन मसोसकर न बैठेगी। वह बग़ावत पर तुली हुई थी। आज वह उसका खून पी जाएगी, जिसके

कारण वह अपमानित हुई है। आखिर उसे हल मिल गया। वह टैक्सी में जाएगी, पैसे घोष बाबू देंगे।

जब माधवी घोष बाबू के दफ़्तर पहुँची, वे किसी को फोन कर रहे थे। माधवी को देखकर उनके माथे पर बल आ गए, स्वागत तो दूर की बात थी। फोन बन्द करके वे पसीना पोंछने लगे। माधवी ने समझ लिया कि अब उसी को पहले बात छेड़नी होगी।

"किराये के पैसे लेने आयी हूँ।"

"मैं एक कौड़ी भी नहीं दे सकता।"

"क्यों ?"

"कल थामस के साथ क्यों लड़ पड़ी ? उसे यदि खुश करती तो किराये के पैसे निकल आते।"

"यह मुझसे न होगा।"

"तुम्हें मनोहर भी अच्छा नहीं लगता, नहीं तो सारा खर्चा आराम से चलता।"

"मैं किसी को नहीं जानती। आप पैसे लाइए।"

"माधवी, धीरे बोलो, तुम्हारी तरह पैसों पर बिकने वाली इज्ज़त नहीं है मेरी।"

"यह तो मैं देख ही रही हूँ। मुझे घर से निकालकर आप जो इज्ज़त का बिज़नेस करना चाहते हैं वह मैं समझ रही हूँ। और जब मैं इस बिजनेस से इन्कार करती हूँ, तो मेरी इज्ज़त पैसों पर बिकने वाली तो है ही।"

घोष बाबू पसीना पोंछकर फ़ाइल में कुछ नोट करने लगे। वे बात बढ़ाना नहीं चाहते थे। माधवी का खून उबलने लगा। आज उसे यह अनुभव हो गया कि वह इसी नराधम के कारण व्यभिचारिणी कहलायी। आखिर वह कितनों को तमाचे मार सकेगी ? कितनों को पैसे देकर शांत करेगी ? किराया लेकर भी वह ईसाई औरत उसे रखैल ही कहेगी। आज माधवी के मन में अपने उच्च कुल की प्रतिष्ठा जाग उठी। उसने यह

निश्चय किया कि आज लौटूँगी तो पैसे लेकर ही, नहीं तो आत्महत्या कर लूँगी।

"माधवी, घर जाओ, मैं आकर किराया दे दूँगा।" घोष बाबू ने एक नयी चाल सोच ली।

"नहीं, अभी पैसे चाहिये।"

"तो मनोहर को फोन करूँ?"

"चाहे जिस शैतान को फोन करो। मुझे तो पैसे चाहिए।"

"तो तुम उसका अपमान तो न करोगी? वह आज रात ही आएगा।"

अब माधवी आपे से बाहर हो गई। उसने लपककर घोष बाबू का कालर पकड़ लिया और अपनी सारी शक्ति लगाकर उनके पर्स की ओर हाथ बढ़ा दिया। घोष बाबू इसके लिए तैयार न थे। वे अपने को छुड़ाने लगे।

"पागल हो गई है क्या, माधवी? छोड़ मुझे, वरना मैं पुलिस को बुलाऊँगा।"

"कमीने, अपनी माँ को सुला न उस मनोहर के साथ! पाजी कहीं का!" माधवी ने आखिर उनका पर्स निकाल ही लिया। कुछ दूर होकर उसने पैसे गिनने चाहे, तो घोष बाबू उसकी ओर बढ़े। माधवी ने मेज़ से पेपरवेट उठा लिया और बोली, "एक क़दम भी आगे बढ़े तो तुम्हारा सिर तोड़ दूँगी!"

घोष बाबू को काली माई याद आ गई। माधवी में इतना ज़ोर हो सकता है, इसकी वे कल्पना तक नहीं कर सकते थे। पसीना पोंछने के लिए रूमाल तक निकालने की उनकी हिम्मत न हुई। पुलिस में तो वे भूलकर भी खबर न करते। मनोहर को भी कहना उचित न था। उसी समय माधवी ने खाली किया हुआ बटुआ उनके सिर पर दे मारा।

"माधवी!" घोष बाबू ने अन्त में हिम्मत की।

पैसे हाथ आते ही माधवी का जी हल्का हो गया। उसने कुत्सित स्वर में कहा, "कहिए जनाब, आज आपको कोई गुरु मिला न?"

"हाँ, इतनी नीच लड़की तो मैं पहली बार देख रहा हूँ।"

"क्यों नहीं ? आपका बिज़नेस कुछ ठप्प अवश्य हो जाएगा, लेकिन कोई बात नहीं। और चिड़िया हाथ आते देर कितनी लगती है ! जब तक आप एक रईस बनकर इस कुरसी पर जमे हैं और जब तक ग़ुरबत किसी-न-किसी गरीब को आप तक पहुँचाती रहेगी, यह बिज़नेस अवश्य फलता-फूलता रहेगा। अच्छा, अब मैं जा रही हूँ। आपके सब पैसे मैंने ले लिये हैं। मेरे लिए इतने ही काफ़ी हैं।"

"माधवी, कम-से-कम टैक्सी के तो पैसे देती जाओ।" घोष बाबू बटुआ टटोल रहे थे।

माधवी ने अपने बैग से एक इकन्नी निकालकर उनके सामने फेंक दी, "यह लो, आज ट्रैम में चले जाना।" वह हँस दी।

बाहर निकलकर उसने टैक्सी के पैसे चुकाए और स्टेशन की ओर चल पड़ी। उसे अपनी विजय पर गर्व हो रहा था। वह स्वयं यह न जानती थी कि उसमें इतना बल है कि वह दिन में दो-दो लड़ाइयाँ लड़ सकती है।

स्टेशन आते ही उसने भोजन करने का निश्चय किया। घोष बाबू से सम्बन्ध-विच्छेद होते ही माधवी की भूख लौट आई थी। वह रेलवे रेस्तराँ में चली गई। कोई मेज़ खाली दिखायी न दी, किन्तु एक मेज़ पर एक अकेली महिला बैठी थी। उसने माधवी को अपने पास बैठने के लिए कहा, तो वह वहीं बैठ गई। उसने खाने का आॅर्डर देकर फिर एक बार अपनी पड़ोसिन की ओर देखा। वह मुस्करा रही थी। माधवी भी मुस्करा दी।

"मैं हूँ रमा पटवर्धन," उसने कहा।

"और मैं हूँ माधवी।"

"कितना सुन्दर नाम है तुम्हारा !"

श्रीमती पटवर्धन की आयु ३० से अधिक और ४० से कम लग रही थी। आधे बाल पक चुके थे। उन्होंने खादी की श्वेत साड़ी पहन रखी

थी। उसका बैग अपेक्षाकृत कुछ बड़ा था। सब मिलाकर वह समाज-सेविकाओं की भाँति लग रही थी।

माधवी का भोजन आ गया। उसकी भूख खाना देखते ही चमक उठी। वह डट के खाने लगी। श्रीमती पटवर्धन कुतूहल से देखती रहीं। उन्हें माधवी से एक लगाव-सा हो आया था।

"कहाँ रहती हो, माधवी ?"

"आज से कहीं नहीं," इतना कहकर माधवी रुक गई। यदि सच बता दे, तो ये क्या सोचेंगी। इस अधेड़ आयु में अधिकतर स्त्रियाँ बहुत ही संकुचित विचार की हो जाती हैं।

श्रीमती पटवर्धन को ऐसे उत्तर की अपेक्षा न थी। वह उलझन में पड़ गईं। अधिक पूछना उन्होंने उचित नहीं समझा। माधवी जैसी उम्र की लड़की का ऐसा उत्तर उन्हें नहीं रुचा। उन्होंने दुनिया देखी थी। वे स्वयं अपनी युवावस्था में कुछ कम न थीं, सारे पूना को हिला देने की क्षमता रखती थीं।

"तो मेरे घर चलो," उन्होंने कहा।

"लेकिन आप तो मुझे जानती भी नहीं ?" माधवी ने आश्चर्य से पूछा।

"क्या जानना आवश्यक है ? तुम्हारा चेहरा तुम्हारे कुल का परिचय दे रहा है। तुम्हारा मौन और तुम्हारे चेहरे पर निराशा की झलक तुम्हारी वर्तमान चिन्ताओं को स्पष्ट कर रही है और तुम्हारी भूख पिछले उपवासों की साक्षी है।"

माधवी मुँह खोलकर देखती रही। उसने पहली बार एक नारी के मुँह से ऐसी बातें सुनी थीं। वह श्रीमती पटवर्धन को मान गई।

भोजन हो चुका, तो माधवी ने चाय मँगा ली। श्रीमती पटवर्धन अब तक तीन प्याले पी चुकी थीं।

"आपने भोजन कर लिया ?"

"काश, मैं भी खा सकती, माधवी ! मेरी भूख तो कब की मर

चुकी है।" इन शब्दों के पीछे जो व्यथा छिपी थी, उसने माधवी के दिल को हिला दिया। वह चुप रही।

चाय आ गई। माधवी श्रीमती पटवर्धन के प्रस्ताव पर विचार करने लगी। उसे घर जा कर किराये के पैसे देने थे और वहाँ से अपने कपड़े लाने थे। इसके बाद उसके पास केवल पचपन रुपये ही बचेंगे। अब तक उसने अपने रहने के बारे में कुछ सोचा ही नहीं था। एक पुष्पा का ही घर था, जहाँ वह रह सकती थी। किन्तु उसने उसकी माँ के बारे में काफ़ी सुन रखा था। श्रीमती पटवर्धन के साथ जाने में काफ़ी सुविधा रहेगी, घर का-सा वातावरण मिलेगा, एक-एक ऐसी साथिन मिलेगी, जो अपनी व्यथा कहेगी और उसकी सुनेगी।

बिल आते ही श्रीमती पटवर्धन ने पैसे निकाल लिये और माधवी के लाख मना करने पर भी दोनों बिलों के पैसे दे दिये।

"चलो, माधवी!" कहकर उन्होंने अपना बैग उठाया।

माधवी उठ खड़ी हुई।

बाहर आते ही माधवी ने कहा, "आप अपना पता दे दीजिए। मैं शाम तक आ जाऊँगी। इस समय जाने दीजिए।"

"बात यह है कि आज शाम को ही मुझे यहाँ से जाना है। अब मैं तुम्हारे रहने का प्रबन्ध किये बिना जाना नहीं चाहती। तुम अपना काम कर लेना।"

माधवी विवश हो गई। आखिर रहने का प्रबन्ध तो करना ही था। वह उनके साथ चल पड़ी।

मरीन लाइन्स के पास ही एक शान्त बँगले में माधवी को एक अलग कमरा मिल गया। श्रीमती पटवर्धन ने माधवी को आराम करने के लिए अकेला छोड़ दिया। माधवी जब तक लेटी न थी, उसे किसी प्रकार की थकावट महसूस न हुई थी, किन्तु अब लेटते ही उसे झपकी आ गई।

जब श्रीमती पटवर्धन ने कमरे में आकर देखा तो माधवी शान्त निद्रा में लीन थी। वह चुपचाप कमरे से बाहर निकल गईं।

१४

श्रीमती पटवर्धन के साथ माधवी के तीन दिन बड़े ही आराम से कटे। उसके कारण श्रीमती पटवर्धन ने अपना पूना जाने का विचार स्थगित कर दिया था। अब माधवी ने किराया चुकाने का विचार अपने मस्तिष्क से हटा दिया था। इन चन्द दिनों में ही वह एक बड़ी बात जान गई थी कि बिना पैसे के एक क़दम भी चलना असम्भव है। जब तक जेब में पैसे हैं तब तक आवाज़ में शक्ति है। उसे केवल भविष्य की चिन्ता थी। वह जानती थी कि उसे जाकर कहीं काम ढूँढना होगा। कहाँ जाय? पुरानी सहेलियाँ मिलेंगी तो हज़ारों सवाल पूछेंगी। घर छोड़ने के पश्चात् माधवी स्वयं अपनी आँखों में गिर गई थी। रह-रहकर वह विचार उसे उद्विग्न कर देता।

"माधवी," श्रीमती पटवर्धन ने बैठक से आवाज़ दी।

माधवी उनके पास आ गई। वहाँ एक खादीधारी युवती बैठी थी। माधवी ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

"यह है गीता।"

"आओ माधवी, बैठो।" गीता ने माधवी का हाथ पकड़ लिया।

माधवी बैठ गई।

"रमा तुम्हारी बहुत प्रशंसा कर रही थी, इसीलिए तुम्हें लेने आयी हूँ।"

"कहाँ?"

"जहाँ भी मैं जाऊँगी।"

"अच्छी बात है। श्रीमती पटवर्धन जहाँ कहेंगी, मैं जाने को तैयार हूँ।"

"बात यह है कि आज हमारी एक मीटिंग है। मेरे साथ जो लड़की काम करती है, वह आज आयी नहीं। यदि तुम चली चलो तो मेरा काम सरल हो जाएगा।"

"चलिए।"

"चलो, कपड़े यही ठीक हैं।"

माधवी श्रीमती पटवर्धन की खादी की साड़ी बाँधे हुए थी। उसने चप्पल पहन लिए और श्रीमती पटवर्धन से पूछा, "जाऊँ ?"

"अवश्य। हाँ, आज मैं पूना जा रही हूँ।"

माधवी का मानो स्वप्न भंग हो गया। उसके चेहरे का रंग उड़ गया।

श्रीमती पटवर्धन ने तब पास आकर कहा, "तब तक गीता यहाँ रहेगी। तुम्हें किसी चीज़ की कमी न होगी। तुम जो बात मुझसे कह सकती हो वह गीता से भी कह सकती हो। मैं तीन-चार दिन में ही लौट आऊँगी।"

फिर भी माधवी वहीं हताश खड़ी रही। उसी समय गीता ने धीरे से माधवी का हाथ अपने हाथ में ले लिया। माधवी को उस स्पर्श में आर्द्रता मिली। वह सँभल गई। फिर गीता ने उसे अपने साथ ले लिया।

गीता प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की एक मज़दूर यूनियन का काम करती थी। मीटिंग में कई मज़दूर भाग लेने आये थे। गीता के पहुँचते ही 'राम-राम' की झड़ी लग गई। गीता प्रायः सभी मजदूरों के नाम जानती थी। वह उनके साथ बड़े ही प्रेम से बातें कर रही थी। वह उन लोगों से एक-एक चवन्नी ले रही थी और माधवी उसकी रसीद बना रही थी। गीता के चेहरे पर मुस्कराहट थी, किन्तु माधवी का चेहरा भावहीन था। इस तरह के काम में माधवी का यह पहला ही प्रवेश था, जिसे आगे बढ़ाने की उसकी तनिक भी इच्छा नहीं थी। उसे रह-रहकर श्रीमती पटवर्धन का विचार बेचैन किये दे रहा था।

आखिर वह सभा समाप्त हुई। माधवी और गीता बस में बैठने के लिए परेल के नाके पर आ खड़ी हुईं। वहाँ गीता के एक परिचित मिल गए। माधवी उन्हें आपत्तिजनक समझ बैठी। वह घर जल्दी जाना

चाहती थी। उसने सोचा कि गीता अवश्य ही श्रीमती पटवर्धन-जितनी सहृदय नहीं है। किन्तु माधवी को अपना विचार शीघ्र ही बदलना पड़ा।

"मुझे तुमसे कुछ आवश्यक बातें करनी हैं, गीता !"

"आज नहीं, नरेन्द्र भाई ! आज इसका जी बहलाने का काम मुझे सबसे पहले करना है। यह है, माधवी।"

माधवी ने बड़ी कठिनाई से उनकी ओर देखा—नरेन्द्र के जुड़े हुए हाथ, खादी के मोटे शुभ्र वस्त्र, हवा में उड़ते हुए बाल और चेहरे की वह अपूर्व मुस्कराहट ! कितनी सुन्दर है यह दुनिया और माधवी को इससे विरक्ति ! उसकी हर चीज़ में यौवन है। माधवी की स्वाभाविक मुस्कराहट लौट आई। नरेन्द्र के नेत्र-दीपों ने माधवी की आँखों में ज्योति जगा दी। गीता को लगा, जैसे किसी ने उसकी छाती पर से कोई बोझ हटा दिया हो।

"नमस्ते !" माधवी चहक उठी।

"नरेन्द्र, तुम भी हमारे साथ चलो। आज रमा नहीं है तुम्हें डाँटने के लिए।"

"सुना है, रमा आजकल कोर्ट में भाग-दौड़ कर रही है ?"

"हाँ, वह अपने पति से अलग हो रही है।"

"चलो, अच्छा हुआ···।"

उसी समय बस आ गई। बात वहीं रुक गई। तीनों बस में बैठ गए। दोनों की खूब बातें हो रही थीं। माधवी अपने विचारों में खोयी हुई थी। उसे श्रीमती पटवर्धन से फुरसत न थी। क्यों उन्हें अपने पति से अलग होना पड़ रहा है ? शायद इसी कारण वे इतनी उदास दिखायी देती हैं। शायद इसीलिए वे दूसरों का दुःख जान जाती हैं। आज यदि उन्होंने मेरी मदद न की होती, तो न जाने मुझे कहाँ जाना पड़ता।

घर पहुँचते ही माधवी को अपने नाम श्रीमती पटवर्धन का लिखा एक पत्र मिला। वह पत्र लेकर बैठ गई। गीता दीवान पर लेट गई और नरेन्द्र वहीं कुरसी पर बैठ गया। अभी उनकी बातों का अन्त नहीं

हुआ था।

माधवी पत्र पढ़ने लगी :

माधवी !

आज अपने प्रति तुम्हारा स्नेह देखकर मेरा मातृत्व जाग उठा। भी तुम्हारी ही भाँति प्रेम से वंचित हूँ। तुम्हारी-जैसी बुद्धिमती लड़की को भी जीवन में इस प्रकार की निराशा मिले, यह देखकर मैं इस समाज से और भी घृणा करने लग जाती हूँ।

तुम अपनी बात कहो-सुनो, तो तुम्हारा दुःख अवश्य कम होगा। क्या तुम्हारा मुझ पर विश्वास नहीं ? जिसने तुम्हारे कोमल हृदय पर चोट पहुँचायी है, वही तो सब-कुछ नहीं है। अभी तुम्हारा समस्त जीवन तुम्हारे सामने पड़ा है। तुम्हें इस संसार में स्नेह की कमी न होगी। कारण, वह इतना बुरा नहीं है, जितना तुम समझ बैठी हो। आशा है, तुम हर एक व्यक्ति से हँसकर बोलना सीखोगी।

तुम्हारी
रमा !

माधवी को अपना भान ही न रहा। वह वहीं बैठी-बैठी आँसू बहाने लगी। उसके सामने घोष बाबू, मनोहर, वह ईसाई औरत और अपने घर के बन्द द्वार नाचने लगे। थोड़ी ही देर में वह फूट-फूटकर रोने लगी।

गीता और नरेन्द्र उसके पास आ गए।

"क्या बात है, माधवी ?" गीता ने उसे प्यार से पुचकारकर कहा।

"कुछ नहीं, मैं अपने घर जाना चाहती हूँ।"

"चलो, मैं ले जाऊँगी तुम्हें। कहाँ है तुम्हारा घर ?"

"माटूँगा।"

"ओह, मैंने समझा कि कहीं दूर है।" गीता ने हँसकर कहा।

"यहाँ दीवान पर आकर बैठो। हम-सब मिलकर सोचेंगे।"

"चलो, माधवी !" गीता ने माधवी के कंधे पर हाथ रखा। नरेन्द्र

अपनी कुरसी पास खींच लाया।

"नरेन्द्र, यह कोई पार्टी का प्रोग्राम बनाने का काम नहीं है। याद रखो कि माधवी अतिशय भावुक है।"

"तुम्हारा मुझ पर विश्वास नहीं है गीता ? मैं बड़ी-से-बड़ी समस्या मिनटों में हल कर सकता हूँ।"

"अच्छा, जाने दो।"

"माधवी, यदि तुम अपने घर का पता मुझे दे सको, तो मैं तुम्हारे माता-पिता से मिल सकती हूँ।" गीता ने गंभीरतापूर्वक विषय छेड़ दिया।

"तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं है न घर जाने में ? पहले ही सोच लो।"

"वाह ! घर जाने में कैसी आपत्ति ?" गीता ने नरेन्द्र की बात काट-कर कहा।

"क्यों नहीं, गीता ?" माधवी के होंठ आखिर खुले, "आज चार महीने बीत चुके हैं मुझे घर छोड़े। मैं मानती हूँ कि सारी ग़लती मेरी ही है। किन्तु उन्होंने मुझे ढूँढने की तनिक भी परवाह नहीं की।"

"सुन लो, गीता !" नरेन्द्र ने विजयी स्वर में कहा, "अब तुम मेरी बात मानो तो मैं तुम्हें अपना प्लान बताऊँ।"

"कहो।"

"देखो, तुम्हें माधवी के माता-पिता से मिलना अवश्य चाहिए, किन्तु उन्हें यह न पता चले कि माधवी ने तुम्हें भेजा है अथवा माधवी घर जाने को उत्सुक है।"

"हाँ, यह बात तो तुम्हारी सोलह आने ठीक है। क्या विचार है माधवी ?"

"मुझे भी यह बात ठीक लगती है। किन्तु मेरे घर जाते ही मेरी अन्य समस्याएँ फिर सिर उठा लेंगी।"

"कैसी समस्याएँ ?" गीता ने पूछा।

"मैं केवल टाइपिस्ट का जीवन बिताना नहीं चाहती। मैं लेखिका बनना चाहती हूँ। जीवन में बहुत बड़ा नाम पाने की मेरी इच्छा है। अक्सर मेरे और उनके विचार नहीं मिलते। मेरा घर जाना मेरी आकांक्षाओं तथा मेरे उच्च लक्ष्य को चिता पर चढ़ाना है।"

"मैं तुमसे सहमत हूँ, माधवी!" नरेन्द्र ने कहा।

"किन्तु माधवी, तुम जब तक घर न जाओगी, कुछ काम न कर पाओगी। तुम बहुत ही भावुक हो।"

माधवी ने उत्तर नहीं दिया। गीता की बात में शत-प्रतिशत सत्यता थी।

"तुम अगर अपने को किसी काम में जुटा दो तो घर को उतना याद नहीं करोगी। वैसे शिक्षा कहाँ तक हुई है तुम्हारी?"

"केवल मैट्रिक तक। अभी पास भी नहीं किया।"

"तब तो समस्या हल हो चुकी," नरेन्द्र ने झट से कहा, "सरकारी होस्टल में रहकर तुम अपनी शिक्षा पूरी कर लो। साथ-साथ लेखन भी जारी रहेगा। कुछ और भी काम देख लिया जाएगा, ताकि तुम्हारा खर्च निकल आए।"

माधवी की भी शिक्षा पाने की हार्दिक इच्छा थी। वह तुरन्त ही नरेन्द्र के प्रस्ताव से प्रसन्न हो गई। गीता माधवी को प्रसन्न देखकर नरेन्द्र की प्रशंसा करने लगी। किन्तु वह इस राह में भी कठिनाइयाँ देख रही थी। नरेन्द्र की भाँति वह चुटकियों में हल निकालने में असमर्थ थी। माधवी की मनःस्थिति ही उसके सामने रोड़ा बनकर खड़ी थी।

"माधवी, तुम्हारा मन स्वस्थ होने में समय अवश्य लगेगा। किन्तु यदि तुम प्रयत्न करोगी तो सफल होते देर न लगेगी। तुम्हें काम भी करना पड़ेगा और पढ़ाई भी। कहने में तो सब-कुछ सरल है, किन्तु यह काफ़ी मेहनत का काम है।"

"मैं तैयार हूँ। घर नहीं जाऊँगी।" माधवी के स्वर में दृढ़ निश्चय था, जिसने गीता के सन्देह को दूर कर दिया।

१५

"किससे मिलना है आपको ?

"श्रीमती स्टोन से ।"

"क्या काम है ?"

"दाखिल होना है ।"

"अच्छी बात है, बैठ जाइए ।"

"चपरासी चला गया । माधवी बैठ गई । दो मिनट में ही चपरासी लौट आया । माधवी उसके पीछे श्रीमती स्टोन के कमरे में आ गई । माधवी ने उस वृद्धा को श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया । चपरासी चला गया । माधवी बैठ गई ।

श्रीमती स्टोन ने अपना चश्मा उतारकर माधवी की ओर देखा ।

"मैं···मैं दाखिला कराना चाहती हूँ ।"

"कब से ?"

"कल से ।" माधवी ने अनजाने ही उत्तर दिया ।

श्रीमती स्टोन अब पास खिसक आईं। पूछा, "आजकल कहाँ रहती हो ?"

"अपनी एक सहेली के घर ।"

"तुम्हारे माता-पिता कहाँ हैं ?"

"यहीं हैं, माटूंगा में रहते हैं ।"

"तुम क्यों निकलीं घर से ?" श्रीमती स्टोन के स्वर में अनुकम्पा थी।

माधवी निरुत्तर हो गई ।

"मुझसे कुछ मत छिपाओ, बेटी ! साफ-साफ बता दो ।"

माधवी की ठोड़ी काँपने लगी और दूसरे ही क्षण आँखों में गंगा-यमुना का दृश्य था । श्रीमती स्टोन ने उठकर दरवाज़ा बन्द किया, फिर माधवी के पास आकर बैठ गई ।

"रोओ मत, शान्त हो जाओ !" उन्होंने उसकी पीठ पर हाथ फेरा ।

इससे माधवी को सान्त्वना मिली। वह चुप हो गई। आँख पोंछकर, नज़र उठाकर उसने उनकी ओर देखा। वे कुछ सोच रही थीं। उन्होंने पूछा, "वह कौन था, जिसके कारण तुम घर से निकलीं ?"

"एक शादीशुदा भद्र पुरुष।"

"क्या अब तुम्हारे मन में उसके लिए प्रेम नहीं ?"

"केवल घृणा है।"

"यहाँ का खर्च कौन देगा ?"

"मैं काम कर रही हूँ।"

"तो पढ़ाई के लिए समय मिलेगा ?"

"जी हाँ, केवल सवेरे ही जाना होता है। शेष समय पढ़ने में बिताऊँगी।"

और भी कई प्रश्नों के उत्तर माधवी ने दिये। श्रीमती स्टोन ने माधवी के रहने का प्रबन्ध कर दिया। दूसरे ही दिन माधवी होस्टल में रहने के लिए चली आयी। श्रीमती स्टोन की वह बहुत ही प्रिय हो चुकी थी। उन्हें उसकी स्पष्ट बातों ने प्रभावित किया था, नहीं तो आये-दिन लड़कियाँ मनगढ़न्त कहानियाँ बताया करती हैं। उन्होंने उसे तीसरी मंज़िल पर कमरा दिया था। उस कमरे में दो बड़ी-बड़ी खिड़कियाँ थीं, सामने अथाह समुद्र। दूर क्षितिज पर सूर्यास्त देखकर माधवी अपनी तन्द्रा में खो जाती। उसका मस्तिष्क, जो चिन्ताओं से लदा रहता था, आजकल रीता-सा रहता। उसकी शून्य दृष्टि कहीं दूर टिकी रहती। वह एक निश्वास छोड़ अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान देना चाहती, किन्तु पढ़ाई में जी न लगता। फिर वह लिखने लग जाती :

प्रिय राज,

इस सूने कमरे में बैठते ही घर की याद आ जाती है। तुम्हारी बहुत ही याद आती है। आज मेरी यह हालत है कि दिन-भर होंठ सीकर बैठना पड़ता है। कोई साथी नहीं, कोई अपना नहीं, जिससे दो शब्द बोल सकूँ। कहीं मैं बोलना ही न भूल बैठूँ। वे दिन याद आते हैं

जब मैं तुम्हें अच्छी लगती थी। अब तुम मुझसे बहुत ही रूठे हो न राज ? कोई बात नहीं। मेरी तक़दीर में यही बदा था। लेकिन तुम मुझे अभी भी प्रिय हो।···

और माधवी मेज़ पर माथा रख जी-भर के रो लेती। आँसू उसके पत्र को धो डालते। इन पत्रों से वह अपना जी हलका कर लेती। भला उसका अहं उसे ऐसे पत्र भेजने देता !

उस दिन संध्या के छः बजे तक वह उदास बैठी रही। उसी समय चपरासी ने आकर कहा, "आपसे कोई मिलने आया है।"

"अच्छा," माधवी कमरा बन्द करके नीचे चली।

गीता और नरेन्द्र थे। दोनों ने माधवी का हाल पूछा और फिर जाकर कैंटीन में बैठ गए।

"माधवी, तुम्हारा यहाँ जी न लगता हो तो घर चलो। आज रमा लौटने वाली है।"

माधवी रोने लगी। उसका जी तो कहीं लगता ही न था। वह कहाँ जाएगी ?

"माधवी, तुम्हें इस तरह रोते देख हमें कुछ भी अच्छा नहीं लगता। तुम्हें पिछली बातों को भूलकर जीवन का एक नया पृष्ठ खोलना चाहिए। जीवन में आगे बढ़ने वाले भूलकर भी पीछे मुड़कर नहीं देखते। तुमने कल ही तो वायदा किया था न ? फिर आज वही ?" नरेन्द्र ने कुछ ऊँची आवाज़ में कहा।

"नरेन्द्र, ऐसी बातें मत करो। न जाने नारी को कब तक रोकर जीवन बिताना है।" गीता के स्वर में निराशा थी।

"कमाल है, गीता ! कम-से-कम तुमसे तो ऐसे विचारों की आशा नहीं थी। नारी जब तक अपने-आपको दीन और कमज़ोर बनाए रखेगी, वह रोती ही रहेगी। उसे तो हिम्मत से आगे बढ़ना चाहिए। आज माधवी रोएगी तो इसके वैरी बहुत ही प्रसन्न होंगे। उन्हें माथा ऊँचा करने का मौका मिलेगा। किन्तु यदि यह अपना जीवन सफल बना ले तो उन्हें

उनके पापों का प्रायश्चित करना होगा।"

गीता देखती रही। नरेन्द्र को वह अभी तक छोटा ही समझती थी। आज प्रथम बार ही उसके मुँह से इतनी बड़ी बात उसने सुनी थी। गीता ने माधवी की ओर देखा। वह चाय पी रही थी। अपने आँसू उसने छिपा दिए थे।

"आप लोग यदि प्रतिदिन यहाँ आ जाएँ तो मुझे यह जीवन इतना भारी न लगेगा।" माधवी ने धीरे से कहा।

"यह फिर तुम्हारी कमज़ोरी है। हम केवल बातों से ही तो तुम्हें ढाढस बँधायेंगे। तुम्हें तो जी-तोड़ मेहनत करनी है। हमारे आने से तुम्हारे लिखने में बाधा पहुँचेगी। लेखक को कल्पना-जगत् में खोए बिना लिखने की प्रेरणा नहीं मिलती। अध्ययन भी तगड़ा होना चाहिए, तब जाकर सफल लेखिका बनोगी। दिन-भर हमारी प्रतीक्षा में रहना और फिर हम लोगों के सामने इस प्रकार रोना तुम्हारी-जैसी बुद्धिमती लड़की को शोभा नहीं देता।"

नरेन्द्र की बातें माधवी के हृदय में चुभ गईं। वह अनजाने ही बह गई थी। नरेन्द्र ने जैसे उसे तमाचा मारकर नींद से जगा दिया था। वह चुप बैठी रही।

नरेन्द्र और गीता बड़ी देर तक बैठे रहे। घर जाते समय नरेन्द्र ने माधवी का हाथ पकड़कर कहा, "मैंने जो-कुछ कहा है, उस पर विचार करना। कल मैं अवश्य आऊँगा। और हाँ, इस बीच एक भी आँसू न गिरने पाए। हूँ!"

माधवी की पलकें फिर एक बार भीग आईं। उस 'हूँ' ने माधवी को बड़ी सान्त्वना दी। उसने दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार की।

१६

माधवी अपना कमरा खोल रही थी कि किसी की आहट पाकर चौंक गई।

"नमस्ते!" वह लड़की मुस्करा रही थी।

"नमस्ते!" माधवी ने भी मुस्कराकर उत्तर दिया।

"जानती हो, तुम मेरी पड़ोसिन हो?"

"अच्छा! अभी नयी हूँ। धीरे-धीरे जान जाऊँगी।"

"तुम तो साल-भर बाद भी न जान सकोगी।"

"क्यों?"

"इसलिए कि काम से काम रखने वालों में से हो तुम।" उसने अपने सुन्दर दाँत दिखाए।

माधवी को उसका हँसोड़ स्वभाव अच्छा लगा, फिर भी वह कुछ कह न सकी। किन्तु उसकी नयी सहेली उसका पीछा छोड़ने वाली न थी। उसके प्रश्नों की वर्षा जारी रही—

"तुम्हारा नाम माधवी है न?"

"हाँ। तुम्हें कैसे पता?"

'देख लो!" कहकर वह खिलखिलाकर हँसने लगी। "अच्छा, अब आओ मेरे कमरे में। तुम्हारे लिए मैं फर्स्ट क्लास चाय बनाऊँगी।"

"मैं अभी चाय पीकर आयी हूँ।"

"रहने दो," मैंने तुम्हें कई बार लगातार चार-चार, पाँच-पाँच कप चाय पीते देखा है।"

"तो तुम मुझ पर इस तरह नज़र रखती हो?"

"क्यों? कहीं नज़र तो नहीं लग गई!"

"लग जाए मेरी बला से। अच्छा सुनो।"

"कम-से-कम मेरा नाम तो पूछ लिया होता?"

"अरे, वही तो पूछ रही हूँ।"

"मुझे श्यामा कहते हैं।"

श्यामा की विनोदी वृत्ति ने फिर एक बार माधवी को अतीत में लाकर छोड़ दिया—वह अतीत जो अब केवल एक स्वप्न बनकर रह गया था; वह अतीत जब वह भी खिलखिलाकर हँस सकती थी। आज तो उसके लिए मुस्कराना भी भारी हो चुका था, अथवा मुस्कराने का मौका ही नहीं मिलता था।

श्यामा की चाय बनकर तैयार हो गई। वह दो प्याले लेकर माधवी के पास आ बैठी।

"क्या सोचने लग गई, माधवी ?" मानो उसने माधवी के मनो-विचार पढ़ लिए हों।

"कुछ नहीं," श्यामा के उस मृदुल प्रश्न से माधवी का गला भर आया। वह अपने आँसू रोकने के लिए वहाँ की पुस्तकें देखने लगी।

श्यामा ने उसका हाथ पकड़ लिया। माधवी ने कुछ नहीं कहा। पल-भर दोनों चुप रहीं।

"माधवी, तुम किस बात पर इतनी दुखी हो ? कौन स्मृति तुम्हें इस प्रकार बेचैन कर देती है ? जानती हो, कोई भी तुम्हारे चेहरे को देखकर यह कह सकता है कि तुम्हारी कोई मूल्यवान चीज़ खो गई है।"

माधवी श्यामा को देखती रही। माधवी ने उसकी आँखों में प्यार की झलक देखी। कहना तो वह बहुत-कुछ चाहती थी, किन्तु उसे अपने आँसुओं का भय लग रहा था। नरेन्द्र ने कहा था, मेरे आने तक एक भी आँसू न गिरने पाए।

"तुम्हें नयी-नयी सहेलियाँ बनानी चाहिए, नये मित्र बनाने चाहिए, ताकि तुम्हें इस तरह अकेला न रहना पड़े। और अपने-आपको इतना दृढ़ बनाना चाहिए कि कोई भी तुम्हारे चेहरे से तुम्हारी बीती कहानी न पढ़ सके।"

माधवी को श्यामा की बातें अच्छी लगीं।

"अभी तो तुम मेरी ही उम्र की हो। पढ़-लिखकर बहुत बड़ी बनने

का ध्येय सामने रखो। फिर अन्य विचार तुम्हारे पास भी न आ सकेंगे।"

"कोशिश तो मैं भी यही करती हूँ, किन्तु विचार मेरा पीछा नहीं छोड़ते।"

"पीछा कैसे छोड़ें ? तुम तो उनके कारण सब-कुछ छोड़ बैठी हो। पहले तो डटकर खाना सीखो। जब तक पेट भरा न हो, तब तक उदासी दूर नहीं होती। आज मेरे साथ बैठकर खाना। मैं भी देखूं कि विचार कैसे तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ते !"

श्यामा की बातों से माधवी की उदासी कोसों दूर भाग गई, और एक हलकी-सी मुस्कान उसके होठों पर खेलने लगी, जैसे बहुत दिन बाद आकाश में बादल छटकर सूर्य चमका हो।

१७

श्रीमती स्टोन लिफ़्ट के पास खड़ी थीं। माधवी ने नमस्कार किया।

"कैसी हो, माधवी ?"

"अच्छी हूँ, धन्यवाद ! मुझे एक नया ट्यूशन मिला है, वहीं जा रही हूँ।"

"लकी ! अच्छा जाओ !"

माधवी द्रुत गति से मरीन ड्राइव के रास्ते पर जा रही थी। मन में विचार थे श्यामा के, अपने भविष्य के। श्यामा ने उसकी जो मदद की थी, उसके लिए वह उसकी आजीवन आभारी रहेगी। वह श्यामा की कोई बात टाल न सकती थी। उसके कहने से दूध पीना माधवी के लिए अनिवार्य हो गया था। इस नये ट्यूशन के साथ ही माधवी की आय बढ़ गई थी। अधिक रुपये हाथ आते ही वह अपने लिए कपड़े बनवाना चाहती थी। अब वह रंगीन कपड़े कभी भी न पहनेगी, केवल

सफ़ेद ही पहनेगी। अपने मनचाहे कपड़ों में अपने को देखने का वह प्रयत्न करने लगी।...यकायक किसी के दौड़ने की आवाज़ से वह रुक गई।

"माधवी! माधवी!" घोष बाबू हाँफ रहे थे, "कब से आवाज़ लगा रहा हूँ, लेकिन तुम चली ही जा रही हो!"

"आप यहाँ क्यों आये?" माधवी के आश्चर्य और क्रोध का ठिकाना न रहा।

"यदि तुम्हारी तरह यह दुनिया होती तो कब की जल जाती।" घोष बाबू पसीना पोंछने लगे। उन्होंने माधवी के क्रोध की तनिक भी परवाह न की, "चलो, तुमसे एक आवश्यक बात कहनी है। सामने ही होटल है।"

माधवी को उनकी बेशरमी पर विश्वास नहीं हो रहा था। वह एक बार निश्चय कर चुकी थी। उसमें कोई परिवर्तन संभव न था। उसे घोष बाबू से कोई लगाव नहीं था। वह उन्हें अत्यन्त नीच प्राणी समझती थी। उसकी वह धारणा कदापि न बदलेगी। जिसने उसे समाज की दृष्टि में गिरा दिया और अपनों के प्यार से वंचित किया, उससे वह बात करे, यह नामुमकिन है!

"मैं कहती हूँ, मेरे पास समय नहीं है। आइन्दा कभी तुम अपनी मनहूस सूरत न दिखाना।" माधवी रुकी नहीं। एक बार मुड़कर भी नहीं देखा।

माधवी पढ़ा रही थी। भीतर से नौकर ने आकर कहा, "आपसे मिलने कोई सज्जन आये हैं।"

माधवी का चेहरा पीला पड़ गया। फिर भी अपने को सँभालती हुई वह उठी।

किसी पिशाच के समान घोष बाबू खड़े थे। माधवी उनके पास गयी। किसी घोर जंगल में भेड़िये के समक्ष बँधी गाय की तरह उसकी स्थिति थी।

"मैंने कहा, मुझे तुमसे कुछ ज़रूरी बात कहनी है। यदि सुनोगी नहीं तो मैं यहीं खड़ा रहूँगा।"

"वाह, सुनूँगी क्यों नहीं ? किन्तु आपको दस बजे तक ठहरना होगा।" माधवी ने अपनी ट्यूशन के कारण घोष बाबू को मीठा जवाब दिया।

उन्हें इतने मीठे उत्तर की अपेक्षा न थी। झट कहा, "मैं नीचे प्रतीक्षा करूँगा।"

घोष बाबू नीचे चले गये। माधवी अन्दर जाकर पढ़ाने लगी। उसने अपने-आपको किंचित् भी विचलित न होने दिया।

"बहनजी, कल हम एक नया कुत्ता ले आये हैं।" छोटी मुन्नी ने कहा।

"अच्छा ! क्या नाम रखा है उसका ?"

"नाम तो आप ही बताइए," बड़ी लड़की ने कहा।

"मैं बताऊँ ?" माधवी सोचने लगी, "हाँ, उसका नाम रखो टीपू सुलतान। कल बतायी थी न कहानी उसकी ?"

"हाँ, बहनजी, टीपू नाम अच्छा है। आप उसे देखने चलिए न, बहनजी ! ऊपर रखा है माताजी ने उसे।"

"चलो," माधवी ने समय देखा, दस बजने में दस मिनट कम थे।

लड़कियों के साथ वह छत पर आ गई। कुत्ता सचमुच ही सुन्दर था। मुन्नी उसके साथ खेलने लग गई। माधवी के सामने समुद्र की लहरें ऊँची उठ रही थीं। पल-भर का एकान्त मिलते ही माधवी के शरीर में भय ने संचार किया। उसके रोएँ खड़े हो गए। नीचे मानो मृत्यु उसकी प्रतीक्षा कर रही थी और वह स्वयं उसके मुँह में गिरने जा रही थी। छोटा-सा चूहा भी बिल्ली के मुँह से भाग निकलने की कोशिश करता है, किन्तु निर्जीव माधवी अपने-आपको उस काल के हाथ सौंपने जा रही है जो निश्चय ही उसे कहीं की न रहने देगा।

"बहनजी, हम यहाँ से लेकर तरुण की छत तक कूदकर जा सकते

हैं।" बड़ी लड़की ने कहा।

माधवी को जैसे भगवान् ने रास्ता दिखा दिया। कहा, "चलो, चलकर देखते हैं।"

पहले दोनों लड़कियाँ कूदीं, फिर माधवी ने उनका अनुकरण किया। तरुण की छत पर पहुँचते ही माधवी ने अपनी छात्राओं से कहा, "तुम लोग तरुण के घर जाओ। मैं अब जा रही हूँ। घर जल्दी लौट जाना, नहीं तो माताजी नाराज़ होंगी।"

"अच्छा बहनजी, नमस्ते!" दोनों ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

माधवी पल-भर में सीढ़ियाँ उतर गई। नीचे आते ही उसने पहले घोष बाबू का जायज़ा लिया। उनकी पीठ माधवी की तरफ़ थी। माधवी लम्बे डग भरती और अपने दिल की धड़कनें गिनती हुई सीधे होस्टल की ओर चल दी। अपने कमरे में पहुँचकर ही उसने आराम की साँस ली।

१८

शाम तक वह अकेली बैठी रही। एक बार सोचा कि श्रीमती स्टोन को वह सारी घटना बता दे, किन्तु दूसरे ही क्षण उसने यह विचार अपने मस्तिष्क से हटा दिया। श्यामा के पास भी नहीं गयी। आज ही अपने उज्ज्वल भविष्य का उसने स्वप्न देखा था और आज ही वह भस्म हो गया। उफ़, कितनी असहाय थी वह! आखिर वह उससे क्या चाहता है? यही न कि माधवी उसके पास रहे और उसका कहना माने। छिः, माधवी कदापि ऐसा न करेगी। वह एक सभ्य घर की लड़की है और वह एक भूल के कारण दूसरी भूल कभी न करेगी।

"माधवी! माधवी!" श्यामा ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ लगा रही थी। माधवी ने देखा, शाम हो चुकी है। उठकर श्यामा के लिए दरवाज़ा

खोल दिया।

"क्या कर रही थी ?" श्यामा ने कुछ तेज आवाज में पूछा।

"कुछ नहीं।"

"तो अकेली क्यों बैठी थी ?"

माधवी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"ख़ैर, आज रात को बात होगी। इस समय तो तुम्हें नीचे जाना होगा। कोई मिलने आई हैं।"

"कौन है ?"

"मैं क्या जानूँ ? जाकर देख लो।"

माधवी सीढ़ियाँ उतरती हुई सोच रही थी—काश, इस समय कोई मिलने न आता !

नीचे हॉल में श्रीमती पटवर्धन खड़ी थीं। माधवी को उन्होंने गले से लगाया। माधवी भी उनसे लिपट गई।

"ओह, माधवी ! तुमने एक पत्र भी न भेजा ! मैं प्रतिदिन तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा करती, किन्तु तुमने मुझे निराश ही किया।"

अपने दुखड़े से भुनी हुई माधवी संसार का व्यवहार भूल चुकी थी।

"तुम्हारी सेहत क्यों गिरती जा रही है, माधवी ?"

माधवी चुप रही।

"दूध कितना पीती हो ?"

"एक पाव।"

"कल से आधा सेर दूध ओवलटीन डालकर पीना। यह लो, मैं तुम्हारे लिए ओवलटीन ले आई हूँ।" माधवी को किसी से कोई चीज़ लेना अपमानजनक लगता है, श्रीमती पटवर्धन यह जान गईं। उन्होंने कहा, "माधवी मैं तुम्हें अपनी लड़की के समान समझती हूँ। मुझसे कोई वस्तु लेने में तुम्हें झिझकना नहीं चाहिए।"

माधवी ने सिर हिला दिया।

"चलो, तुम्हारी कैंटीन में बैठते हैं। नरेन्द्र और गीता आते ही होंगे।"

नरेन्द्र का नाम सुनते ही माधवी का हृदय धड़कने लगा। वह चुप-चाप उनके साथ कैंटीन में आकर बैठ गई। श्रीमती पटवर्धन उसे पूना का हाल बता रही थीं। किन्तु माधवी की आँखें कैंटीन के दरवाज़े पर बिछी थीं और मन कहीं दूर नरेन्द्र के इर्द-गिर्द उड़ रहा था। माधवी की समझ में न आ रहा था कि उसे जो सान्त्वना नरेन्द्र से मिलती है वह श्रीमती पटवर्धन से, किंवा गीता से क्यों नहीं मिलती? श्रीमती पटवर्धन माधवी की आज तक कितनी सहायता कर चुकी थीं! गीता ने उसके साथ रहकर उस पर कितना बड़ा एहसान किया था! लेकिन नरेन्द्र ने तो केवल बातें ही की थीं। फिर भी माधवी को उसीसे मिलने की उत्कंठा थी।

गीता और नरेन्द्र आ गए। पहले तीनों ने पार्टी की चर्चा की, फिर माधवी की बात होने लगी। श्रीमती पटवर्धन का एक ही वाक्य चल रहा था, "यदि इसकी सेहत बिगड़ गई तो क्या होगा?"

"दिन-भर यह मन मारे बैठी रहती है।"

"रमा, तू अपने घर ले चल इसे," नरेन्द्र ने सुझाया।

"मेरे केस का फ़ैसला हो जाए, फिर मैं इसे ले जाऊँगी। उससे पहले नहीं।"

"क्यों?"

"मेरे कारण यह क्यों बदनाम हो?"

"ठीक है, रमा!" गीता ने कहा।

फिर चुप्पी छा गई। तीनों को शान्त देखकर माधवी बेचैन हो उठी। उसने सोचा, मेरे कारण इन सबको कितनी परेशानी हो रही है! उसने उन्हें श्यामा के बारे में बताया।

"और भी नयी-नयी सहेलियाँ बनाओ, माधवी, तुम्हारा जी बहल जाएगा।"

"वही मैं भी सोचती हूँ। किन्तु न जाने क्यों किसी के सामने आते ही मेरी वाणी मूक हो जाती है।"

"तुम्हारे मन पर ज़बरदस्त आघात हुआ है, माधवी, उसे ठीक करना

सर्वथा तुम्हारे ही हाथ है।"

"मैं प्रयत्न करूँगी।"

"भगवान् तुम्हें सफलता दे।" श्रीमती पटवर्धन की आँखें भर आईं। वह उठ गई। गीता और नरेन्द्र भी उठ गए। माधवी उन्हें फाटक तक छोड़ आई।

माधवी लौट रही थी कि सामने श्रीमती स्टोन के कमरे से घोष बाबू की आवाज़ सुनायी दी। उसे लगा कि वह भागकर कहीं दूर चली जाए। उसने रामदीन चपरासी को अपनी ओर आते देखा, तो रुक गई।

"आपको बुलाया है।"

"आती हूँ।"

माधवी अन्दर गयी। उस समय कोई बोल नहीं रहा था। वह श्रीमती स्टोन के पास खड़ी हो गई।

"आज क्या हुआ, माधवी ?" श्रीमती स्टोन के स्वर में माधवी के लिए पर्याप्त ढाढस था।

माधवी ने सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया। श्रीमती स्टोन की छाती अभिमान से फूल गई।

"आप इसे बहका रही हैं।" घोष बाबू कहने लगे, "मैं फिर ऊपर गया और सेठानी से कहा कि माधवी मेरी पत्नी है, किन्तु वह मुझसे मिलती नहीं।"

दोनों औरतों के चेहरे पीले पड़ गए।

"आपने यह अत्यन्त नीच कृत्य किया, मिस्टर घोष !" श्रीमती स्टोन गुस्से से लाल हो गईं, "मैं आपको वारनिंग देती हूँ कि यदि आप इस लड़की के रास्ते से दूर नहीं होंगे तो···"

"तो आप क्या करेंगी ? यह एक बार मेरी बात सुन ले, तो मैं हटने को तैयार हूँ।"

"लेकिन मैंने आपसे सौ बार कहा है कि इसकी आपसे मिलने की इच्छा नहीं है, फिर भी आप समझते नहीं।"

"एक बार मेरे साथ यह रह चुकी है, आज मेरी बात सुनने को तैयार नहीं ? और आप इसकी तरफ़दारी करती हैं ? क्षमा कीजिए, मैडम, यह आपके यहाँ की रीति होगी, हमारे यहाँ की नारी केवल एक बार ही वर सकती है।"

"तो क्या आप इससे ब्याह करना चाहते हैं ?"

"मेरी पत्नी अभी जीवित है। तलाक़ की तो मेरे जैसे लोग सोच भी नहीं सकते।"

"आपकी बातें सुनकर कोई भी यही कहेगा कि आपके पास समझ कुछ कम है। इसका आपको इलाज कराना चाहिए। आपका मतलब यह है कि माधवी अब हमेशा के लिए आपके साथ रहे और समाज में उसका कोई स्थान न हो। ऐसी कमीनी बात ज़बान पर लाते आप झिझकते भी नहीं। आपको शरम आनी चाहिए।"

अब माधवी बोली, "इतना ही नहीं, यह तो चाहते हैं कि कभी-कभी इनके मित्रों को भी मैं अपने साथ रहने दूँ, ताकि इनकी जेब से एक कौड़ी भी न जाए।"

माधवी की बात ने घोष बाबू को चुप कर दिया। श्रीमती स्टोन ने घंटी बजाकर उनसे कहा, "आप जा सकते हैं। माधवी आपसे मिलना पसंद नहीं करती। आशा है, आप मेरी वार्निंग भूलेंगे नहीं।"

१९

माधवी की परीक्षा के केवल नौ दिन रह गए थे। आजकल वह बराबर अपनी कक्षा में बैठी रहती। उसके अतिरिक्त आठ और लड़कियाँ उसके साथ थीं। अधिकतर मुस्लिम थीं और कुछ अमीर भी। फ़रीदा अपने पिता की गाड़ी में आती और अपने साथ इथेल और ज़किया को भी ले आती। माधवी इन तीनों के साथ

बैठती, उनकी बातें ध्यान से सुनती, कहती कुछ नहीं। फ़रीदा अमीर होने के बावजूद इतनी भोली और सरल स्वभाव की थी कि वह माधवी की बहुत ही प्रिय हो गई। फ़रीदा और उसकी सहेलियाँ माधवी से प्रेम करतीं, क्योंकि माधवी बुद्धिमती थी। माधवी जो पाठ एक बार पढ़कर याद कर लेती, वह फ़रीदा को तीन बार पढ़ने पर भी याद न होता। क़िन्तु वह जो-कुछ माधवी की ज़बानी सुनती, उसे फौरन याद हो जाता। अब माधवी को लेने फ़रीदा की गाड़ी प्रतिदिन होस्टल पहुँच जाती।

उस दिन सब छात्राएँ अपनी जगह पर बैठी हुई थीं। लड़के उनके पीछे बैठे हुए थे। प्रिंसिपल साहब आँख की बनावट समझा रहे थे। "वह गड्ढा जिसमें हमारी आँख रखी हुई है, एक इंच का होगा," कहते हुए सहसा उनकी दृष्टि माधवी पर जा टिकी। बोले, "किन्तु माधवी की आँख का गड्ढा शायद डेढ़ इंच का होगा।"

लड़के शोर मचाने लगे, लड़कियाँ खिलखिलाकर हँसने लगीं। माधवी पहले तो लाल हुई, किन्तु दूसरे ही क्षण वह भी हँसने लगी। लड़कों का शोर बन्द होने में देर लगी। आखिर प्रिंसिपल साहब ने सबको शांत किया और उनका पाठ पूर्ववत् चलने लगा।

बारह बजे माधवी को उसके होस्टल छोड़कर फ़रीदा की गाड़ी चली गई। माधवी अपने कमरे में आ गई। केवल पढ़ाई की चिन्ता थी उसे। नरेन्द्र का विचार आता था, लेकिन कम। शाम तक उसने कमरा नहीं छोड़ा। श्यामा ने उसकी पढ़ाई में बाधा न डालने का आश्वासन दिया था, किन्तु माधवी से रहा न गया। वह उसके कमरे में चली गयी और दोनों सहेलियों ने मिलकर कुछ समय गप्पें हाँकीं। अन्त में माधवी ने उसे अपनी पढ़ाई के बारे में बताया, "बस, अब एक रिवीज़न और करना है। मैं परीक्षा के लिए तैयार हूँ।"

"मानती हूँ माधवी, तुमने पिछले एक सप्ताह में काफ़ी मेहनत की है। विश यू बेस्ट ऑफ़ लक!"

माधवी अपने कमरे में लौट आई। फिर किताबों में माथा छिपा लिया।

२०

मार्च महीने का दूसरा सप्ताह था। आज माधवी की परीक्षा का दिन था। उस दिन माधवी ने पुस्तकों की तरफ़ देखा तक नहीं। अरसे बाद आज उसके होंठों पर गीत आया था। बार-बार वह शीशे के सामने रुकती और गाने लग जाती। साढ़े नौ बजे फ़रीदा की गाड़ी उसे लेने आएगी। नाश्ता लेने वह श्यामा के साथ गयी। प्रथम बार ही श्यामा ने माधवी का सुरीला पक्ष देखा। माधवी गा रही थी—का करूँ सजनी आये न बालम···

श्यामा मुस्करा देती। दूसरी लड़कियाँ भी एक बार देखकर हँस देतीं।

सवा नौ बजे फ़रीदा की गाड़ी आ गई। माधवी श्रीमती स्टोन के कमरे में गयी। आज वह सबका आशीर्वाद लेना चाहती थी। उसके प्रसन्न चित्त का प्रतिबिम्ब उसके चेहरे पर खेल रहा था। श्रीमती स्टोन ने उसे दही खिलाकर विदा किया और फ़रीदा की गाड़ी दादर की ओर दौड़ने लगी।

फ़रीदा ने माधवी से कई प्रश्न पूछे, किन्तु जवाब में उसने केवल 'का करूँ सजनी आये न बालम' ही सुना। फ़रीदा को माधवी का मूड देखकर आश्चर्य लग रहा था। उसने भी अपनी पुस्तक बन्द कर दी। माधवी जब कोई छोटी-मोटी तान लेती तो ज़किया सम पर ताली बजा-कर तबलिये का अभिनय करती। और फ़रीदा, 'वाह-वाह! जवाब नहीं!' कहकर उन्हें हँसा देती। इथेल को भी आनन्द आ रहा था, किन्तु कम। माधवी ने उसे झकझोर दिया और गाने को बाध्य किया।

परीक्षा-हॉल में जाकर अपनी-अपनी जगह देख लेने के बाद चारों बाहर आ गईं। साढ़े दस बजे श्रीमती पटवर्धन, गीता और नरेन्द्र आ गए। माधवी को प्रसन्न देखकर तीनों की चिन्ता दूर हुई। नरेन्द्र को छोड़कर दोनों अपने काम पर चली गयीं। नरेन्द्र को लड़कियों में हीरो बनते देर न लगी। वह उन्हें तरह-तरह के चुटकुले सुनाकर हँसा रहा था।

परीक्षा समाप्त हो गई। अब माधवी के सामने एक बड़ी समस्या मुँह फाड़े खड़ी थी। वह कहाँ जाएगी? परीक्षा समाप्त होते ही लड़कियाँ अपने-अपने घर जाने लगीं, किन्तु माधवी के लिए कोई ऐसी जगह नहीं थी जहाँ वह अधिकारपूर्वक जा सके। उसने हर पहलू को ले-लेकर सोचा। वह शहर से कहीं बाहर जाना चाहती थी। अपनी खिड़की में खड़ी वह दूर लहरों पर डूबते सूर्य की किरणों का नाच देख रही थी। सागर उनका पलना था, लहरों का संगीत उनकी लोरी, पवन रेशम की डोर, जो उन्हें अपने सशक्त एवं मृदुल हाथों से झुला रहा था।

अपने संसार में खोयी हुई माधवी एक व्यक्ति के रूमाल के इशारे से फिर लौट आयी। उस व्यक्ति को पहचाना, तो वही भय उस पर फिर छा गया। उसके रोएँ खड़े हो गए, शरीर में कँपकँपी-सी होने लगी। क्रोध प्रकट करने के लिए उसने खिड़की झट से बन्द की और आकर कुरसी पर बैठ गई।

कुछ देर में ही चपरासी ने आकर कहा, "आपसे कोई मिलने आये हैं।"

माधवी कमरा बन्द करके नीचे उतरने लगी। वह क्या सोच रही थी? कुछ नहीं। शून्य मस्तिष्क और शून्य हृदय। भारी क़दमों से अपने-आपको खींचती हुई वह जा रही थी।

"क्या काम है?"

"वही जो मैंने परसों बताया था। घोष बाबू के स्वर में विजय का घोष था। वे जानते थे कि उनके कारण माधवी का एक ट्यूशन जाता रहा। अब माधवी कम-से-कम उतनी निडर नहीं हो सकती।

"ठीक है, यहाँ बैठ जाइए।" माधवी ने हॉल में एक सोफ़े की ओर संकेत किया।

"नहीं माधवी, यहाँ नहीं। बाहर चलो। मैं तुम्हें एक बड़ी स्कीम बताना चाहता हूँ।" घोष बाबू ने प्यार से कहा।

माधवी ने कुछ नहीं कहा। वह उन्हें टालने का कोई ऐसा उपाय चाहती थी कि फिर कभी उनकी सूरत दिखायी न दे, और वह एक ही तरीक़ा था—चलकर उनकी बात सुन लेना।

वह उनसे कुछ कहे बिना ही बाहर चली आयी और नज़दीक के रेस्तराँ में जाकर बैठ गई। घोष बाबू भी आ गए। उन्होंने फ़ैमिली रूम में चलने का सुझाव दिया, तो माधवी ने इन्कार कर दिया। घोष बाबू लाचार हो बैठ गए। चाय मँगाकर उन्होंने माधवी को अपनी स्कीम के बारे में बताना आरम्भ किया—

"देखो माधवी, एक मासिक पत्र निकालने का विचार है। तुम इसकी सम्पादिका बन सकती हो। इस पत्र के कारण तुम शहर के सभी नामी पत्रकारों एवं लेखकों के सम्पर्क में आओगी। सम्पादिका बनना आसान तो नहीं है, किन्तु मैं जानता हूँ कि तुम उतनी बुद्धिमती अवश्य हो। साथ-साथ तुम आगे पढ़ भी सकती हो।"

माधवी के मस्तिष्क में केवल एक ही विचार था कि वह कब यहाँ से अपने कमरे में लौट जाए। घोष बाबू की कोई बड़ी-से-बड़ी बात भी माधवी को लुभा न सकती थी। उनका समाज में क्या स्थान था, अब वह जान गई थी। जिस व्यक्ति की जीविका सेठ लोगों को लड़कियाँ पहुँचाकर चलती है, वह समाज का कितना हेय प्राणी होगा! और माधवी ने ऐसे कापुरुष को अपना प्रथम प्रेम अर्पण किया था! छीः! इस नीच अधम से उसे कदापि प्रेम न हुआ था। वह चढ़ते यौवन की एक स्वाभाविक वासना-मात्र थी। माधवी के हृदय में सन्तोष-सा छा गया। उसे यह कल्पना सुखद लगी कि उसे कभी घोष बाबू से प्रेम नहीं हुआ था। अब उसका ध्यान घोष बाबू की बातों पर आ गया।

२१

"मैंने तुम्हारे लिए एक युक्ति सोच ली है। यदि तुम मानो तो तुम्हारी समस्या हल हो सकती है।" श्रीमती पटवर्धन अपनी आरामकुरसी पर बैठी थीं। माधवी खड़ी-खड़ी उनकी बातें सुन रही थी। अब तक माधवी की कहानी वे जान गई थीं। वे चाहती थीं कि माधवी कुछ दिन के लिए बम्बई से बाहर चली जाए।

"आपकी बात नहीं टालूंगी," माधवी ने कहा।

"तो हमारे भूदान की पद-यात्रा में सम्मिलित हो जाओ। कुछ समाज-सेवा का अनुभव होगा और महाराष्ट्र की हवा से स्वास्थ्य भी सुधर जाएगा। परीक्षा के परिणाम आते ही कॉलिज में दाख़िल होने के लिए लौट आना।"

माधवी भूदान और पद-यात्रा शब्द सुनते ही मोहित हो गई। इससे बढ़िया कार्यक्रम क्या हो सकता है? भूदान तथा विनोबाजी के बारे में उसने सुना था। किन्तु उसने कभी यह न सोचा था कि वह स्वयं इस महान् कार्य में भाग ले सकेगी।

"मैं जाने को तैयार हूँ। कब जाना होगा?"

"कल ही जा सकती हो।"

"पैसे कितने लगेंगे?"

"तुम्हारे पास कितने हैं?"

"दस-बारह रुपये होंगे।"

"बस, अधिक की आवश्यकता नहीं।"

माधवी कमरे में जब लौटी तो उसने अपनी सारी पुस्तकें बटोरीं और गिरगांव की एक दुकान पर जाकर बेच दीं। उस दुकानदार ने कहा था, "अभी परिणाम नहीं निकला, आप पुस्तकें क्यों बेच रही हैं?"

"मैं अपना परिणाम जानती हूँ।"

दुकानदार चुप रहा। उसने नौ रुपये निकाले, तो माधवी ने कहा,

"मुझे पूरे दस की आवश्यकता है।"

दुकानदार का अनुमान ठीक था। उसने एक रुपया अधिक दे दिया। पुस्तकें विवश होकर बेची जा रही थीं।

माधवी कमरे में आकर लेट गई। वह रुपये की चिन्ता में डूब गई। फिर उसे एक विचार ने कमरे से बाहर निकाला। कमरा बन्द करके वह थामस साहब के दफ़्तर की ओर चल पड़ी। उनके अन्तिम शब्द उसे अभी भी याद थे। वह बिना संकोच उनकी मेज़ तक जा पहुँची। वे लिखने में व्यस्त थे। माधवी को देखते ही उनकी परिचित मुस्कराहट लौट आई। साथ ही माधवी का संकोच भी। वह बैठ गई।

"माधवी, कितने दिन बाद आज आयी हो ?"

"आपसे एक बहुत ज़रूरी काम है।"

"कहो," थामस साहब मेज़ पर कुछ झुक गए।

"मैं भूदान में भाग लेने जा रही हूँ। शायद दो महीने तक वहाँ रहूँगी। वहाँ का हाल लेख के रूप में आपके पास भेजूँगी। आप उसे कहीं भी छपवाकर रुपये मेरे नाम भेज दिया करें। क्या यह संभव है ?" माधवी एक साँस में कह गई।

"वाह, संभव क्यों नहीं ? भूदान-आन्दोलन आजकल ज़ोर पकड़ रहा है। यदि तुम आँखों देखा हाल लिखो तो हम अपने पत्र में उसे छाप देंगे।"

"यानी ?"

"तुम अपना सवेरे से शाम तक का कार्यक्रम लिखा करो। अपनी ओर से उसमें साहित्यिक पुट भरो। अवश्य छाप देंगे। क्या मैं अपनी ओर से उसमें सुधार कर सकता हूँ ?"

"क्यों नहीं ?" माधवी उठ गई।

थामस साहब भी उठ गए।

"मैं जा रही हूँ। एक बात और, मेरा पता और किसी को भी नहीं मिलना चाहिए।"

"निश्चिन्त रहो।" थामस साहब ने हाथ जोड़ लिये।

माधवी वहाँ से चली गई।

२२

सुबह का सुहावना समय था। उस छोटी-सी पगडण्डी पर भूदान के मतवाले आशा का सन्देश लेकर देहातों को नवजीवन देने को उत्सुक थे। माधवी भी अपने साथियों के साथ आगे बढ़ रही थी, किन्तु उसके कदमों में प्राण नहीं थे। उसका तन चल रहा था, मन कहीं और घूम रहा था। निर्मल हवा तथा शान्त वातावरण उसके विचारों को उकसाते रहते। आज उनके पथक में एक बड़े नेता आने वाले थे। उनकी चर्चा माधवी सभी के मुँह से सुन चुकी थी। उसने आज तक, नेता क्या होते हैं, यह देखा नहीं था। इसी कारण वह उन्हें देखने को उत्सुक हो रही थी।

छोटे-छोटे गाँव, भोले-भाले किसान और वहाँ का दारिद्र्य का साम्राज्य माधवी के मन में नैराश्य भरता जाता था। देश स्वतन्त्र हुआ किन्तु देहातों में अभी स्वतन्त्रता का आगमन नहीं हुआ था। पहले जितना ही आज भी किसान अपढ़ था।

उस दिन गाँव की पाठशाला में दादा के दर्शन हुए। आयु पचपन साल की थी, किन्तु देह बड़ी ही फुर्तीली थी। पथक के कार्यक्रम अब उन्हीं के आदेशानुसार चलने लगे।

"तो तुम हो माधवी!" दादा ने माधवी के कंधे पर हाथ रखा। "कैसी लगती है पद-यात्रा?"

"पद-यात्रा तो ठीक है, किन्तु यहाँ का भोजन मैं खा नहीं सकती।"

"शहर की लड़कियों से और क्या उम्मीद की जा सकती है?"

माधवी को उनकी बात कड़ी लगी। वह चुप हो गई। दूसरे ही

क्षण माधवी का हाथ पकड़कर दादा बाहर आ गए और पक्की सड़क पर चलने लगे। दादा के पैरों में मानो पंख लगे थे। माधवी को उनके साथ चलने के लिए बीच-बीच में दौड़ना पड़ता। किन्तु दादा ने इस पर ध्यान नहीं दिया। उनकी यात्रा का अन्त गाँव के मुखिया के घर पहुँचकर हुआ। दादा से बातचीत करने को मुखिया भी उत्सुक थे। माधवी ध्यान से सुनती रही। दादा की भाषा सरल और स्पष्ट थी। मुखिया की प्रत्येक शंका का निराकरण दादा कर रहे थे। उसी समय भीतर से एक पाँच-छ: साल की बालिका ने आकर माधवी का ध्यान आकर्षित किया। माधवी को वह बुला रही थी। माधवी उठकर भीतर चली गयी। अन्दर आठ-दस औरतें बैठी हुई थीं। उन्होंने माधवी को अपने पास बिठाया और उससे प्रश्न पूछने लगीं। पहले तो भूदान को लेकर ही बातें हुईं, फिर विषय बदल गया।

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"माधवी।"

"शहर में क्या करती हो ?"

"पढ़ती हूँ।"

"विवाह नहीं किया अभी ?"

"नहीं।" माधवी ने सहज ही उत्तर दिया।

सभी औरतें खिलखिलाकर हँसने लगीं। माधवी कुछ समझी नहीं, किन्तु वह भी उनके साथ हँसने लगी।

"हँसी क्यों आई ?"

"तुम लजायी नहीं, इसलिए।"

अब माधवी सचमुच हँसने लगी। उसके पास एक उसकी उम्र की ही लड़की बैठी थी। उसका आँचल माथे तक खिचा हुआ था। माधवी ने उसे और नीचे खींच दिया और हँसते हुए पूछा, "लजाना कैसे ? ऐसे ?"

फिर हँसी गूँज उठी। उस लड़की ने अपना लाल चेहरा ऊँचा करके

माधवी की ओर देखा और मुस्करा दी। बड़ी ही सुन्दर थी वह लड़की।

"यह अब माँ बनने वाली है," दूसरी ने कहा।

"चुप रह ढीठ," वह शरम से सुर्ख हो उठी।

"सच ?" माधवी ने उसकी ठोड़ी ऊँची करके पूछा, "लड़का चाहिए कि लड़की ?"

"लड़की क्यों, लड़का ही होगा।" एक अधेड़ स्त्री ने कहा।

"यह इसकी सास है," किसी ने परिचय करा दिया।

किन्तु बहू ने कहा, "तुम्हारे-जैसी लड़की हो तो मुझे लड़की भी अच्छी लगेगी। उसका नाम माधवी रखूँगी।"

सास को बहू की चाह अच्छी नहीं लगी। कहा, "ऐसी आँखें तो सिलमे में होती हैं।"

"मैं तो कभी सिलमे में नहीं गयी, माँजी !" माधवी ने कहा।

"कोई रहा होगा तुम्हारे घर में।" दूसरी ने कहा।

"यह कैसे हो सकता है ?" मेरी माँ तो आपकी तरह घर ही बैठी रहती है। माधवी ने बात को छोड़ना न चाहा।

"तब उसने किसी सिलमेवाली का मुँह देखा होगा।" किसी ने माधवी का समाधान करने की चेष्टा की।

"क्या मतलब ?" माधवी की समझ में नहीं आया।

उसी समय माधवी के लिए चाय लेकर मुखिया की पत्नी आ गई। उसने माधवी से कहा, "आओ बेटी, चाय पी लो।" फिर अपनी सहेलियों से कहा, "ये शहर की पढ़ी-लिखी लड़कियाँ हमें बेच आ सकती हैं। इनसे बहस नहीं करनी चाहिए।"

माधवी मुस्करा दी। उसने चाय का घूँट अभी लिया भी न था कि दादा ने आवाज़ दी। चाय गले से नीचे उतारकर वह बाहर जाने लगी। जाने से पहले उसने हाथ जोड़कर नमस्कार किया और कहा, "शाम को सभा में अवश्य आना। मैं गीत सुनाऊँगी।"

"हम तो नाच देखेंगे।" वह अधेड़ औरत माधवी को सचमुच ही अभिनेत्री समझ बैठी थी।

"नाचना तो नहीं आता। हाँ यदि आप साथ दें तो मैं ना भी नहीं करूँगी।"

हँसी के फव्वारे छूटने लगे। माधवी के उस पैने उत्तर से सब प्रसन्न हो गई। केवल उस अधेड़ औरत के मुँह से एक अस्पष्ट-सी गाली निकल गई, जो केवल उसकी बहू ने सुनी। दूसरों के कान वह शब्द सुनने के आदी न थे।

२३

"माधवी बहन !" उसके साथी बुला रहे थे। माधवी नदी में दो घण्टे से नहा रही थी।

दादा ने चन्द्रकला से कहा, "जा, उससे कह कि दादा बुला रहे हैं।"

चन्द्रकला दौड़ती हुई नदी के किनारे पहुँच गयी।

"माधवी बहन, दादा बुला रहे हैं।" चन्द्रकला ने कहा।

"अभी आती हूँ," कहकर माधवी पानी से निकलकर बाहर आ गई।

दोनों सहेलियाँ एक बड़े वृक्ष की आड़ में खड़ी हो गई। माधवी ने कपड़े बदले। चन्द्रकला उसे देख रही थी। माधवी के पास सब-कुछ था। वह पढ़ी-लिखी थी। उसके कपड़े अच्छे थे। हर समय पास में पैसे रहते थे। उसके पास कुछ नहीं था। वह सोचती, यदि कुछ होता तो भूदान की तो उसे कभी न सूझती। अन्य कई लड़के भी इसी दिशा में सोचते थे। देश में बेकारी बढ़ती जा रही है। स्कूल तथा कॉलिजों से निकलकर भारतीय नौजवान अनाथ-सा हो जाता है। उसके कोमल हृदय पर इससे गहरा क्या आघात हो सकता है? भविष्य के सुनहरे

स्वप्न राख हो जाते हैं। उसका यौवन कुम्हला जाता है। समाज को उसकी आवश्यकता नहीं, उसके लिए कोई स्थान नहीं। उसे शीघ्र ही अपना दृष्टिकोण बदलना पड़ता है। ऐसी दशा में भूदान-आन्दोलन जैसे कार्य में भाग लेकर कम-से-कम रोटी का प्रश्न तो हल हो ही जाता है। हाँ, ये भूदान के सन्देशवाहक अपने से भी गरीब किसानों के 'मान न मान मैं तेरा मेहमान' बन जाते हैं। हो सकता है कि इन समाज-सेवकों को रोटी खिलाकर आदर्श किसान की पत्नी स्वयं भूखी सो जाती होगी।

दोनों सहेलियाँ लौट आयीं। शंकर ने चिल्लाकर कहा, "माधवी बहन के तीन पत्र और एक मनीआर्डर है।"

माधवी का हृदय धक्-से हो गया। "कहाँ हैं पत्र?" माधवी ने दादा से पूछा।

"मेरे पास हैं। पहले कान पकड़ो और कहो—अब कभी नदी में इस तरह घण्टों नहीं बैठोगी।"

"नहीं बैठूँगी, दादा! अब मेरे पत्र दे दीजिए।" माधवी इतना कह-कर पत्र लेने लगी।

दादा और अन्य लड़कों को माधवी की इस तोबा ने हँसा दिया। शंकर ने कहा, "ऐसे नहीं मिलेंगे, मिठाई खिलाओ।"

दादा ने पत्र दे दिये। माधवी पत्र लेकर दूसरे कमरे में चली गयी। पहला पत्र थामस साहब का था। उन्होंने माधवी के लेखों की प्रशंसा की थी। साथ ही कुछ सूचनाएँ भी दी थीं। एक मनीआर्डर भेजा था बीस रुपये का। अन्त में लिखा था—यदि अधिक रुपये की आवश्यकता हो तो संकोच मत करना।

माधवी ने दूसरे पत्र देखे। दोनों श्रीमती स्टोन के थे। दोनों को खोलकर दिनांक देखा। दोनों एक ही दिन लिखे गए थे। एक सवेरे दस बजे लिखा था। सारांश था—वह आया था, तुम्हारे पते के लिए बहुत विनती की। मैंने कहा कि मुझे पता नहीं। तब उसने कहा कि वह किसी तरह पता पा लेगा और तुम्हारे कुछ सोचने से पहले ही तुम्हारे सामने

जा खड़ा होगा। आशा है तुम घबराओगी नहीं। वह तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता।

दूसरा संध्या के पाँच बजे लिखा था—माधवी, न जाने कैसे उस पापी को तुम्हारा पता मिल गया है। वह मुझसे यह कहकर गया कि वह आज ही तुम्हें पत्र लिखेगा। अब उसके जो मन में आए करने दो। मैं तुम्हें क्या सलाह दूँ ? यदि चाहो तो लौट आ सकती हो। मैं तुम्हारा हर हालत में स्वागत करूँगी। भगवान् तुम्हारी रक्षा करें।

माधवी की हँसी लुप्त हो गई। फिर एक बार वही शैथिल्य छाने लगा। फिर उसकी शून्य दृष्टि दीवारों पर घूमने लगी। दादा के सहवास में माधवी का मन खिल उठा था। आज वह फिर मुरझा गया। वह वहीं बैठी रही। उसके लिए पृथ्वी के सारे कारोबार ठप्प हो चुके थे। सूर्य-चन्द्र का भ्रमण रुक गया था, ग्रह-तारों की गति धीमी हो गई थी।

किन्तु शंकर से न रहा गया। वह आ ही पहुँचा, "दीदी ! दीदी !"

माधवी ने सिर उठाकर देखा। उस पर जैसे वज्रपात हुआ—माधवी की आँखों में आँसू ? अवश्य कोई अशुभ समाचार आया होगा। वह वहाँ से चला गया। सीधे दादा के पास पहुँचा। दादा गाँव वालों से चर्चा करने में मग्न थे।

"दादा, दादा ! एक बात सुन लीजिए।" शंकर की आवाज़ में कातरता थी।

"रुक जाओ।" दादा अपनी बात समाप्त करना चाहते थे।

किन्तु शंकर ने दम नहीं लिया। कहा, "दादा, माधवी बहन कब से…" आगे कहने की आवश्यकता नहीं थी।

दादा तुरन्त ही माधवी के पास पहुँच गये। शंकर भी उनके पीछे-पीछे था।

माधवी को निर्णय करते देर न लगी। उसी रात वहाँ से निकल जाने का उसने संकल्प कर लिया। माधवी ने दादा को देखकर सिर झुका लिया।

"क्या बात है माधवी ?" दादा ने माधवी के माथे पर हाथ रखा।

माधवी ने अपने आँसू पोंछकर उनसे कहा, "मैं आज ही बम्बई चली जाऊँगी।"

"अकेली मैं कैसे भेज सकता हूँ ?" दादा ने कहा।

"मैं आयी अकेली, तो क्या अकेली जा नहीं सकती?"

"यदि जाना आवश्यक हो तो मैं नहीं रोकूंगा। शंकर और चन्द्रा तुम्हारे साथ स्टेशन चले जायेंगे। यह लो, तुम्हारे नाम मनीआर्डर आया है।" माधवी ने पैसे ले लिये।

शंकर ने जाकर टिकट ले लिया।

"माधवी बहन, हमें भूल मत जाना।" चन्द्रकला ने नमस्कार किया। दो अश्रु उसके जुड़े हाथों में ढुलक गए।

"नहीं चन्द्रा, भूलूंगी कैसे ?" माधवी ने शंकर की ओर देखा। वह कहीं और देखकर माधवी की नज़र टाल रहा था।

"शंकर, मैं तुम्हारी बहुत ही आभारी हूँ। तुम हमेशा मुझे हँसाते रहते थे और आज तुम ही रो रहे हो।" माधवी को अपनी उस अवस्था में भी हँसी आ गई। शंकर भी मुस्करा दिया। माधवी ने सोचा, आँसू तो केवल स्त्रियों की ही आँखों में सुन्दर लगते हैं, पुरुषों को नहीं।

समय हो चुका था। गाड़ी ने सीटी दी और इस प्रकार माधवी की भूदान-यात्रा समाप्त हो गई।

अब माधवी भविष्य की चिन्ता में खो गई। होस्टल जाने-भर के पैसे उसके पास नहीं थे। बिना पैसों के जाना श्रीमती स्टोन की सहानुभूति का नाजायज़ फ़ायदा उठाना था। तब कहाँ ? घर ? क्या हर्ज़ है ? उसका भी तो कोई अधिकार है उस पर। हाँ, ठीक है। घर ही जाऊँगी। अगले स्टेशन पर माधवी ने अपने पिता के नाम तार दिलवाया और आराम से सो गई।

२४

दादर स्टेशन पर आकर गाड़ी रुक गई। माधवी उतरकर सामने खड़ी लोकल में चढ़ने लगी। उसी समय उसने अपने पिता को देखा। माधवी ने प्रणाम किया और उनसे भी गाड़ी में चढ़ने के लिए कहा। पिता ने माधवी की ओर ध्यान से देखा। कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। वही निर्मम माधवी। जैसी थी वैसे ही है। आज साल-भर बाद भी पिता के लिए उसके पास सिवा प्रणाम के कुछ नहीं था।

"कहाँ से आ रही हो?"

"रामगाँव से। वहाँ भूदान का काम करने गयी थी।" माधवी ने उत्तर दिया।

पिता ने कुछ कहा नहीं। जो घर वालों की सेवा न कर सकी, वह गाँववालों की सेवा क्या करेगी? यदि करेगी भी तो वह बेकार है।

माटूंगा स्टेशन पर उतरकर दोनों चुपचाप घर की ओर चल दिए।

राज घर पर नहीं था। माधवी को देखते ही माँ ने उसे गले लगाया। पिता ने सोचा, बेटी तो केवल माँ के गले ही लग सकती है। उन्होंने माधवी को मन-ही-मन माफ़ कर दिया।

माधवी स्नान करके अँगीठी के पास बैठ गई। माँ ने खिचड़ी और मसालेदार आलू बनाये थे। घर का भोजन आज अरसे बाद मिला था। माधवी ने पेट भरके ही नहीं, जी भरके खाया। कहा कुछ नहीं। माँ निराश हुई—इतना भी न कहा गया कि भोजन स्वादिष्ट बना है। हाथ धोकर माधवी लेट गई। तकिये पर सिर रखते ही नींद सवार हो गई।

जब आँख खुली तो देखा, राज सामने बैठा था। माधवी ने मुस्करा दिया। राज प्रथम कुछ लजाया, फिर मुस्कराया। माधवी उसे देखती रही। कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ है। यह वही राज है?

"कब आयी दीदी?" राज उसके पास आकर बैठा।

हे भगवान्, आवाज़ भी बदल गई है ! पास आते ही माधवी ने देखा, राज के चेहरे पर दाढ़ी फूट निकली है, जैसे कोमल-कोमल कोंपल। और वह भद्दी, मोटी आवाज़ उसके यौवन की मुनादी दे रही है।

"सवेरे ही आयी थी मैं। तुम कहाँ गये थे ?"

"मैं कारखाने जाता हूँ काम सीखने।"

माधवी चुप रही। उसे यह समझते देर न लगी कि राज आगे की पढ़ाई के बजाय काम सीखने जाता है, अर्थात् घर की हालत खस्ता है··· अर्थात् उसे फिर एक बार घर के खर्चे का बोझ ढोना पड़ेगा। उसने फिर अपने भाई की ओर देखा। इस छोटी उम्र में ही यह भारी काम कर रहा है, और एक शिकन भी नहीं माथे पर। इन सुकुमार हाथों में बड़े भद्दे औज़ार क्या अच्छे लगेंगे ? बचपन में ज़रा-सी ठेस लगते ही जो राज रो पड़ता था, आज मैकेनिक का काम सीख रहा है ! इस आयु में तो इसे कॉलेज जाना चाहिए, कॉलेज के खेल-कूद में भाग लेना चाहिए, ऐतिहासिक स्थलों को देखने जाना चाहिए। किन्तु यह सब मध्यवर्गीय युवकों के नसीब में कहाँ ? माधवी ने जो कुछ सोचा, अपने तक ही रखा। उठकर, अपना अन्तिम लेख लिखकर थामस साहब के नाम भेजने के लिए रख दिया। अपना दूसरे दिन का कार्यक्रम मन-ही-मन तय कर लिया। उसी समय उसने क़सम खाई कि वह राज को जीवन की कड़वाहट से दूर रखेगी। दिन-भर माधवी ने अपनी माता से एक शब्द भी न कहा, और न कहने की इच्छा ही थी। कहने लायक़ कुछ था भी नहीं। भला अपना दुखड़ा भी कभी माँ से बताया जाता है ! छीः ! वह चुप ही रहेगी। वह चुप ही रही। शाम को भी सबसे पहले भोजन करके वह सो गई।

राज जब रात को लेट गया तो माधवी के विचार उसे सताने लगे। बेचारी माधवी ! बिना कारण ही उसका गला भर आया। आँखें मूँदकर वह सोने की कोशिश करने लगा। रात को उसने एक डरावना स्वप्न देखा। देखा, पिताजी माधवी को खूब पीट रहे हैं। माधवी की आँखों से

चिनगारियाँ निकल रही हैं। वह रोती हुई घर से निकल बाहर जा रही है और राज उसे चीख-चीखकर बुला रहा है, दीदी ! दीदी ! वह चिल्लाता तो बहुत है, किन्तु गले से आवाज ही नहीं निकल रही है। लाख कोशिश करने पर भी उसकी आवाज़ उसके काम नहीं आती। और दीदी तो आगे बढ़ी ही जा रही है। पीछे से पिताजी का शोर सुनायी देता है और उसकी माँ छाती पीटकर रो रही है। जब आँख खुली तो राज ने अपने-आपको पसीने से तर पाया। उसी समय माँ की खाँसी सुनायी दी, जिससे उसने यह अनुमान लगाया कि वह अभी जाग रही है। पिता ने भी करवट बदलकर अपने जागने की गवाही दी। माधवी के अतिरिक्त सभी बेचैन थे। केवल वही गाढ़ी निद्रा का आनन्द ले रही थी। राज मुस्कराकर छत ताकने लगा।

२५

एक सप्ताह के अन्त तक माधवी तीन जगह काम करने लग गई। राज को उसने कारखाने से हटाकर कॉलेज भेज दिया। दफ़्तर से लौटकर घर आती, तो पढ़ने में समय बिताती। अब किसी को उससे कोई शिकायत नहीं। अब अड़ोस-पड़ोस वालों की भी वह प्रिय हो गई।

किन्तु माधवी का वह स्वच्छन्द स्वभाव उन्होंने फिर नहीं देखा। वह जितनी देर घर रहती, मौन रहती। उसका वह भयंकर मौन तोड़ने की हिम्मत किसी में न थी। माँ सोचती, इस यौवन में ही यह बुढ़ापा कैसा ? सफ़ेद धोती तो विधवाओं को शोभा देती है, फिर माधवी को उसकी चाह क्यों ? क्यों वह पहले की तरह बोलती नहीं, हँसती-हँसाती नहीं ? क्यों ऐसी सुन्न-सी बैठी रहती है ? क्या खो गया है इसका ?

माधवी अपने विषय में कम सोचती। हर चीज़ वह राज के लिए

लाती—मिठाई, फल, दूध। और राज पूछता, "दीदी ने क्या लिया ?"

माँ कहती, "नहीं, अभी नहीं।"

राज आधा दीदी के लिए रख देता। लेकिन दीदी अपना आधा माँ अथवा पिता को खिला देती। स्वयं कुछ खाने का मोह उसे नहीं था। माँ ज़ोर लगाती तो वह खीझ उठती और उसका अपमान भी कर देती। माँ आँसू पीकर रह जाती। हमारे भाग्य में लड़की की यह दशा भी देखनी थी! अब तक इसका विवाह कर दिया होता तो यह ऐसी पागल न होती। विवाह का विचार उसने अपने पति से बताया। उन्हें भी माधवी की चिन्ता हो रही थी। कहा, "करना तो चाहिए किन्तु हमारा एकमात्र सहारा यही तो है। दो-तीन साल तक राज कुछ कर नहीं सकता, तब तक ठहरना ही होगा। फिर वह हमारा कहना मानने ही क्यों लगी ?"

माँ चुप रही। उसे, क्षण-भर के लिए ही क्यों न हो, अपने पति की स्वार्थ-बुद्धि अति हेय लगी। किन्तु दूसरे ही क्षण उसे उनकी बात की सत्यता स्पष्ट दिखायी देने लगी।

२६

"दीदी !"

"क्या ?"

"मैं इसी वर्ष फ़ाइनल में जा सकता हूँ।"

"सच ?"

"हाँ, आज ही प्रिंसिपल साहब ने कहा कि यदि मैं टर्म के सवा-सौ रुपये दे दूँ तो फ़ाइनल की परीक्षा में सम्मिलित हो सकता हूँ।"

"ठीक है, देख लेंगे," माधवी की दृष्टि फिर अपनी पुस्तक पर लौट आई। किन्तु इस नये विचार ने उसके मस्तिष्क में ता-ता-थेई करना शुरू

किया। वह जानती थी कि यह राज की मेहनत का फल है। उसे प्रोत्साहन देना उसका कर्तव्य है। किन्तु इतने रुपये कहाँ से आयेंगे ?

दूसरे दिन माधवी का जी काम में न लग सका। वह रुपये की उलझन में परेशान हो रही थी। किसी से रुपये माँगने-जितना नीच कर्म इस संसार में और कोई नहीं होगा। वह रहीम से सहमत थी। उस एक वाक्य को मुँह से निकालने तक कम-से-कम तीन बार नरक के दर्शन होते होंगे। और आज माधवी स्वयं उस स्थिति में आ फँसी है।

उस दिन श्यामा उससे मिलने आयी। माधवी ने श्यामा की कीमती साड़ी देखकर उसीसे पैसे माँग लिए।

"कब चाहिए ?"

"एक-दो दिन में।"

"प्रयत्न करके देखती हूँ। एक और उपाय है, यदि तुम मानो तो।"

"वाह, मानूँगी क्यों नहीं ?"

"भाई, तुम सिद्धान्तों पर मिटने वालों का मुझे कभी विश्वास नहीं होता।"

"बताओ जल्दी, कौनसा तरीका है ?"

"देखो, मेरे एक मित्र हैं। बहुत ही अमीर हैं। उन्होंने तुम्हें देखा है। वे तुम्हारी अवश्य सहायता करेंगे।"

"तो दिला दो न, श्यामा ! मैं उनके पैसे अवश्य लौटा दूँगी।"

"तुम समझी नहीं, माधवी !"

"तो तुम ही समझा दो।" माधवी अधीर होती जाती थी।

"बात यह है कि तुम बहुत ही अच्छी लगती हो और वे तुमसे मित्रता स्थापित करना चाहते हैं। पैसे तो फौरन मिल जाएँगे।"

माधवी के सामने बात स्पष्ट हो गई। पल-भर के लिए उसको अपने कानों पर विश्वास ही न हुआ। श्यामा यह क्या कह रही है ? उसने श्यामा को अच्छे घर की लड़की समझकर, अपना हृदय खोलकर दिखा दिया था। क्यों उच्च शिक्षा भी श्यामा को इन घृणित विचारों से दूर

न कर सकी ?

श्यामा ने समझा, माधवी मान जाएगी, वरना चुप क्यों बैठती ?

"श्यामा, तुमसे ऐसी आशा न थी।"

"मैं जानती थी, माधवी, तुम नैतिक-अनैतिक को बहुत मानती हो। फिर भी तुम्हारी परेशानी देखकर मुझसे रहा न गया। यदि हो सका तो मैं ला दूंगी।"

"नहीं, श्यामा, मैं तुमसे रुपये नहीं ले सकती। पाप के पैसे को मैं नहीं छू सकती। मैं तुमसे भी यही कहूँगी कि अब तक जो किया उसे भूल जाओ। अब इस नीच रास्ते पर पाँव मत रखो।"

"माधवी, मुझे तुम्हारे उपदेश की आवश्यकता नहीं। अपने पास रहने दो उसे। मैंने तो केवल तुम्हारी सहायता करने की नीयत से कहा था। यदि तुम्हारी इच्छा न हो तो पड़ी रहो अपनी पुण्य की आग में। मैं जा रही हूँ।"

"श्यामा, लड़कर मत जाओ।"

"और कोई रास्ता नहीं है, माधवी ! मैं पापिन हूँ, तुम्हें मुझसे घृणा करनी चाहिए।"

"नहीं श्यामा, पापी से कैसी घृणा ? घृणा तो मुझे पाप से है।"

माधवी का शान्त स्वर श्यामा के तन में आग लगा रहा था।

"ईसा का अवतार लेकर आयी हो, यह मैं नहीं जानती थी।" श्यामा एड़ी पटकती हुई चली गयी।

माधवी चुप रही। हाँ, रुपये के बजाय अब वह श्यामा के बारे में सोचने लगी। उसने माधवी को कितनी सान्त्वना दी थी! श्यामा ने अपने सहवास से माधवी को उसका पाप भुलाने में सहायता की थी। आज माधवी ने उसे पापिन कहकर रुष्ट किया। जिसके कारण वह अपनी मुश्किलों से लड़ सकी थी, आज वही उससे लड़कर चली गयी। एक साथी छूट गया।···पुष्पा का भी विचार आया। माधवी ने उसे हटा दिया। आज शाम को वह राज से कह देगी कि रुपये नहीं मिल सकते। दो दिन रूठेगा,

फिर ठीक हो जाएगा। वह अपने काम में लग गई। चार बजे अपना काम समाप्त करके वह बैठी थी। आज सवेरे से मैनेजर साहब नहीं आये थे। चाय पीने की इच्छा हो रही थी। उसने चपरासी को बुलाया।

"जी!"

"जल्दी चाय ले आओ।"

"हमारे लिए भी ले आना, भाई!" मैनेजर साहब ने प्रवेश करते हुए कहा।

"चार बज रहे हैं। आप अब आ रहे हैं।" माधवी ने कहा।

"आज काम ही कुछ ऐसा था। तुम भी सुनकर प्रसन्न हो जाओगी।"

"लगता है, कोई लड़ाई जीतकर आये हैं आप।" माधवी जाकर उनके सामने बैठ गई।

उन्होंने फ़ाइल रखकर माधवी की ओर देखा। माधवी सुनने के लिए उत्सुक थी।

मि० शाह पचास से अधिक आयु के होते हुए भी कई बार बच्चों का-सा व्यवहार किया करते थे। आज भी माधवी उनकी बात सुनने बैठ तो गई, किन्तु उन्हें वह कोई महत्त्व नहीं दे पा रही थी। किन्तु उनका एक शब्द उस पर जादू कर गया।

"क्या कहा?" माधवी ने चिल्लाकर पूछा।

"हाँ, माधवी बेन, यही तो कह रहा हूँ। आपको भी बोनस मिलेगा।"

"कितना?"

"डेढ़ महीने की तनख्वाह।"

माधवी की आँखें चमक उठीं। वह आगे कुछ सुनना नहीं चाहती थी। मि० शाह कह रहे थे, "बोनस नये कर्मचारियों को नहीं मिलता। किन्तु मैंने तुम्हारे काम की खूब प्रशंसा की और सेठजी फ़ौरन मान गए। पता है, मुझे कितने मिलेंगे? पूरे पन्द्रह सौ। बैंक में रख दूंगा।"

"बैंक में रखने से लाभ?"

"बुढ़ापे में काम आएगा।"

माधवी ने सोचा, अब कौनसा यौवन है !

"तुम क्या करोगी ?"

"ख़र्च कर दूंगी ।"

"क्यों ?"

"आज जब ऐटम और हाइड्रोजन बम जैसे अस्त्र मानव के हाथ आ चुके हैं तो हम भविष्य से आशा ही क्या रख सकते हैं ? कई राष्ट्रों ने अपने भण्डार भर रखे हैं। एक-न-एक दिन तो उसका उपयोग होगा ही ।"

"लेकिन तुम नहीं जानतीं, माधवी बेन, आज का मानव बहुत सयाना हो चुका है ।"

"यह तसल्ली-मात्र है। कोई-न-कोई झक्की अवश्य आएगा, जो इनको उपयोग में लाने से पहले किसीसे पूछेगा तक नहीं, चाहे वह स्वयं जल जाए । किन्तु दूसरों को जलाकर ही वह मरेगा । आप भी जानते हैं कि हम आग से खेल रहे हैं ।"

"कितना आशाजनक समाचार लाया था मैं ! तुमने अपनी निराशा से उसका नाश कर दिया ।"

"असलियत से दूर भागना आपको शोभा नहीं देता ।"

"तो क्या किया जाए ?"

"पैसे का सदुपयोग, क्योंकि यह अन्तिम महायुद्ध अनूठा होगा । सवेरे चाय पीते समय उसका समाचार आएगा और दोपहर तक न आप रहेंगे, न आपका रेडियो । अच्छा, अब चाय पी लीजिए ।"

लेकिन मि० शाह सचमुच दूसरी दिशा में बह गए थे । उन पर ज़बरदस्त निराशा छा गई थी ।

और माधवी ? वह ख़ुश थी । उसका एक महान् समस्या हल हो चुकी थी । ऐटम बम का विचार आज के दिन उसे परेशान नहीं कर सकता ।

२७

एक दिन फ़रीदा, ज़किया और इथेल माधवी के घर पहुँच गईं। माधवी घर पर नहीं थी। सहेलियाँ प्रतीक्षा में बैठी रहीं। माधवी की माँ ने चाय बनाकर उनका सत्कार किया। फिर यहाँ-वहाँ की बातें होने लगीं।

"माधवी को फ़र्स्ट क्लास अवश्य मिलेगा," फ़रीदा ने माँ से कहा।

माँ समझी नहीं। फ़रीदा ने उन्हें माधवी की परीक्षा का हाल सुनाया। माता को आनन्द भी हुआ और दुख भी। इतनी बड़ी बात का माधवी ने ज़िक्र तक नहीं किया था!

माधवी आ गई और अपनी सहेलियों को अपनी भूदान-यात्रा का हाल सुनाने लगी।

"तुम्हारे लेखों में देहातों का बड़ा सजीव वर्णन है, माधवी! अब्बा को भी बहुत अच्छे लगे।"

"मैंने सब कटिंग रखे हैं अपने पास," इथेल ने कहा।

"अच्छा!" माधवी का मन गुदगुदाया।

अन्त में फ़रीदा ने मुख्य विषय छेड़ा, "हम तो तुम्हें लेने आये हैं, माधवी!"

"कहाँ?"

"हाजी मलंग। ज़किया ने उत्तर दिया।

"वह कहाँ है?"

"कल्यान से दस मील दूर एक पहाड़ पर।"

"वहाँ जाने से मुराद पूरी हो जाती है। आज शाम को जायेंगे और कल शाम को लौट आयेंगे।"

माधवी ने अपनी माँ की ओर देखा। माँ ने सोचा, चली जाएगी तो शायद उनकी कृपा से बदल जाएगी। कहा, "इच्छा हो तो हो आओ। मैंने भी उनका नाम सुना है।"

"अच्छा ! मैं तो आज ही सुन रही हूँ। ख़ैर, आप लोगों के साथ समय तो मज़े में कटेगा। लेकिन भोजन का क्या प्रबन्ध होगा ?"

"मेरी अम्माँ वहीं हैं। वह ख़ुद अपने हाथों भोजन बनाकर खिलायेंगी। केवल बदलने के लिए कपड़े ले लो।"

"ठीक है," माधवी ने चाय पी ली और मुँह धो, कपड़े बदलकर वह उनके साथ चल पड़ी।

२८

माधवी ने सोचा कि हाजी मलंग के दर्शन करने से पहले ही उसकी साँस टूट जाएगी। फ़रीदा भी बुरी तरह हाँफ रही थी। किन्तु उनका हाजी मलंग पर जो अटूट विश्वास था, उसके कारण उनके होंठों पर कोई शिकायत नहीं आ रही थी। चारों एक चट्टान पर बैठ गईं। एक अन्धा भिखारी गाता हुआ आ रहा था। उसके मधुर स्वर से सारा रास्ता गूँज उठा—

"दौलत नहीं चाहिए मुझे, ऐशो-इशरत न चाहिए।
बस एक बार आपके दीदार भर चाहिए।
ओ, हाजी मलंग दूल्हे !"

अंधा गाता हुआ उनके पास पहुँच गया। फ़रीदा ने उसे इकन्नी दी। वह आशीर्वाद देता हुआ आगे बढ़ गया। जब मज़ार पास आ गया और माधवी ने वहाँ का वातावरण देखा तो उसे विश्वास हो गया कि यहाँ रहने वालों को हैज़ा अवश्य होगा। इतनी कठिन पहाड़ी चढ़कर, अंत में ऐसी गलीज़ जगह पहुँचकर वह अत्यन्त निराश हो गई। उसने कुछ कहा नहीं। फ़रीदा एक मामूली होटल के सामने खड़ी होकर पानी माँगने लगी। पानी आते ही माधवी के अतिरिक्त सभी ने पिया।

"यहाँ से कहीं और चलो, फ़रीदा !" माधवी ने त्रस्त स्वर में कहा।

होटल से पुराने बाजे पर 'अँखिया मिलाके जिया भरमाके' गाने के स्वर माधवी के मस्तिष्क को भेद रहे थे।

फ़रीदा को माधवी का व्यवहार अच्छा नहीं लगा, किन्तु वह चुप रही।

"हमें कहाँ ठहरना होगा?"

"वहीं तो चल रहे हैं। अपनी कुटिया शान्त और साफ़-सुथरी है। तुम्हें कोई कष्ट नहीं होगा।" फ़रीदा माधवी की अधीरता से डर रही थी।

फ़रीदा ने ठीक ही कहा था। कुटिया छोटी-सी थी, किन्तु साफ़ थी। प्रवेश करते ही माधवी चारपाई पर लेट गई। थकावट के कारण तुरन्त ही उसे झपकी आ गई। क्षण-भर में वह शान्त निद्रा के अधीन हो चुकी थी।

जब आँख खुली तो दूसरे कमरे से किसी के गाने की आवाज़ आ रही थी। शायद कोई नमाज़ पढ़ रहा था। वह ध्यान देकर सुनने लगी। अवश्य ही अरबी ज़बान में क़ुरान पढ़ी जा रही थी। अरबी आज वह प्रथम बार ही सुन रही थी। उस ज़बान पर वह मोहित हो गई। वहीं ध्यान-मग्न सुनती रही। आँखें मूँदकर वह उन अजनबी शब्दों पर सवार होकर तैरने लगी। उसे अपनी सहेलियों का भी ध्यान नहीं रहा। गीत समाप्त हुआ। अब क़ुरान पढ़ा जाने लगा। कुछ देर वह उस शान्ति का आनन्द लेती रही। फिर यकायक उसे ध्यान आया कि वह अकेली है। उठकर वह उस कमरे में चली गयी, जहाँ से क़ुरान पढ़ने की आवाज़ आ रही थी। फ़रीदा के पिता क़ुरान पढ़ रहे थे। फ़रीदा, उसकी माता, ज़किया और इथेल बैठी हुई थीं।

फ़रीदा के पिता ने क़ुरान पढ़ना बन्द कर दिया।

"आओ, बेटी!" फ़रीदा की माँ ने माधवी के लिए जगह कर दी।

"मज़ार कब जाना होगा?"

"आप ही का इन्तज़ार हो रहा था, जनाब!" फ़रीदा ने हँसकर

कहा।

"ओह, मैं न जाने कैसे सो गई।" माधवी ने शर्मिन्दा होकर कहा।

"कोई बात नहीं। यहाँ सोने से उम्र-भर की थकावट दूर हो जाती है।" फ़रीदा की माँ ने माधवी से कहा।

"आप कब आयीं?"

"मैं और फ़रीदा के अब्बा यहाँ दस दिन से ठहरे हुए हैं। अब कल आप लोगों के साथ लौट चलेंगे। अच्छा, चलो मज़ार हो आएँ।"

माधवी ने धोती बदली और फ़रीदा का हाथ थामे मज़ार की ओर चल पड़ी। मज़ार का वातावरण बहुत ही स्वच्छ तथा पवित्र था। भीतर जाते ही सभी ने अपनी ओर से हाजी मलंग को प्रणाम किया। किसी ने मज़ार को चूमा। माधवी ने कुछ भी नहीं किया। उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। मज़ार की एक प्रदक्षिणा कर सब एक कोने में बैठ गए। फ़रीदा की माँ अपनी माला लेकर जप करने लगीं। माधवी भक्तों की भीड़ देखती रही। फ़रीदा ने कहा, "अपनी मुराद माँग लो माधवी! अवश्य पा जाओगी।"

माधवी मुस्कराकरा चुप रही। सोचा, बाबा मेरी मुराद भी न जान सकेंगे तो पूरी किस तरह कर सकते हैं? क्या मुझे अपनी परीक्षा के परिणाम का भय है? क्या मेरी मेहनत उसके लिए पर्याप्त नहीं? छी:! मुझे विश्वास है कि मैं अवश्य सफल हो जाऊँगी। फिर मुझे क्या चाहिए? नौकरी? वह भी है। वह क्या चीज़ है जिसका अभाव मेरे जीवन को इतना नीरस बना रहा है? क्या कमी है?

कुरान पढ़ा जा रहा था। तीन-चार लोग मिलकर पढ़ रहे थे। वे मज़ार की ओर पीठ करके पश्चिम की ओर देख रहे थे। माधवी ने आँख मूँद ली। धीरे-धीरे वह खो गई। वह उन अनजान शब्दों पर तैरने लगी। वे शब्द जैसे उसे किसी गहरे सागर में लिये जा रहे थे। उसने अपने-आपको उनके हाथ सौंप दिया। उसने देखा कि वह सचमुच किसी सुन्दर नगरी में प्रवेश कर रही है। जिस दरवाज़े से वह भीतर आयी थी, ठीक उसी

के सामने उतना ही बड़ा दरवाज़ा था। किन्तु वह बन्द था। माधवी ने अपने-आपको उस बन्द दरवाज़े के सामने देखा। उसकी निगाह किवाड़ों पर जाते ही वह दरवाजा खुल गया। खुलते समय किर्र-किर्र की तीन बार आवाज़ आयी। माधवी आगे बढ़ने लगी। फिर उसने अपने को एक सुन्दर बाग़ में पाया।...चारों ओर पानी के तुषार हवा में बिखरे हुए हैं। हर तरफ़ रंग-बिरंगे फूल खिले हैं। फूलों पर भँवरे मँडरा रहे हैं। न दिन है, न रात। सन्ध्या का समय है। आगे बढ़ती हुई वह दूसरे दरवाज़े के पास आ पहुँचती है। यह भी बन्द है। किन्तु माधवी का हाथ लगते ही खुल जाता है और वही किर्र-किर्र की आवाज आती है। यहाँ बड़े-बड़े पेड़ हैं। पेड़ों पर पक्षी बोल रहे हैं। पशु उन वृक्षों के तले आराम से बैठे हैं। हवा में वही तुषार माधवी के गालों को गुदगुदा रहा है। अब माधवी ने पल-भर के लिए अपनी ओर देखा। वह सफ़ेद धोती बाँधे है। उसके खुले केश हवा में लहरा रहे हैं।

इस प्रकार माधवी कई दरवाज़े पार कर और कई सुन्दर बाग़ों से होती हुई एक बड़े-से कमरे में आ पहुँचती है। कमरा दरगाह के कमरे से मिलता-जुलता है। किन्तु यहाँ फ़र्श पर रेशमी कालीन बिछे हुए हैं। उस पर खड़ी माधवी वहाँ जलते दीप को देख रही है। हवा में तुषार के बजाय वही कुरान के पाठ तैर रहे हैं। कितनी शान्त जगह है यह! माधवी अपनी आँखें मूँदकर उस सकून का आनन्द ले रही है। उसने सोचा कि उसे इस स्वर्ग तक किसने पहुँचाया है? किसकी कृपा से उसे यह शान्ति नसीब हुई है? उसे उस भिखारी का गीत याद आया, "बस एक बार आपके दीदार-भर चाहिए!" माधवी ने चारों तरफ़ देखा। कोई नहीं था। फिर उसकी नजर उस अकेले दीप पर लौट आयी। अह शान्त जल रहा था। उसने सोचा, उन्हें आवाज दूँ तो क्या वे आयेंगे? किन्तु उस शान्त वातावरण को छेड़ने का साहस उसे नहीं हुआ। उसने वहीं दीप के पास माथा नवाया। वह अब सचमुच ही उन्हें देखने के लिए आतुर हो उठी। किन्तु उसकी इच्छा पूर्ण न हो सकी। उसकी आँख भर

आई। एक गरम आँसू उसके हाथों पर आ गिरा। माधवी को लगा जैसे किसी ने उसे पहाड़ से नीचे फेंक दिया हो। स्वप्न टूट चुका था। माधवी ने देखा, उसकी सहेलियाँ वहाँ नहीं थीं। फ़रीदा के पिता उसी की प्रतीक्षा में थे। उसने अपनी आँखें पोंछ लीं और मज़ार को चूमकर बाहर आ गई।

"चलो बिटिया, फ़रीदा अब तक बैठी है तुम्हारे लिए।"

"चलिए," माधवी की आँखों से मानो आलोक चू रहा था।

माधवी को देखते ही फ़रीदा ने कहा, "अरे माधवी, तुम तो हम सबकी गुरु निकलीं। हम तो भूख लगते ही लौट आये।"

माधवी केवल मुस्करा दी।

"कैसी लगी जगह ?"

"बहुत सुन्दर।"

खाना खाते समय माधवी ने फ़रीदा के पिता से पूछा, "मज़ार के दोनों दरवाज़े कब खुलते हैं ?"

"उर्स के दिनों में।"

"क्या आपने उन्हें खुलते देखा है ?"

"हम तो हर साल ही देखते हैं।"

"क्या वह दरवाज़ा खुलते समय तीन बार किर्र-किर्र की आवाज करता है ?"

उन्होंने उत्तर नहीं दिया। अपनी पत्नी की ओर देखा। वह भी चौंकी-सी माधवी को देख रही थीं।

"तुम्हें कैसे पता ?" फ़रीदा ने आश्चर्य से पूछा।

माधवी अपना लम्बा स्वप्न उन्हें सुनाने लगी। भोजन वहीं रह गया। स्वप्न के वर्णन में बाबा के चाहने वाले खो-से गए।

जब माधवी चुप हो गई तो पल-दो पल के लिए कोई कुछ न बोला। फिर फ़रीदा के पिता ने पूछा, "जब तुम मज़ार गयीं, तो तुमने मन में क्या सोचा था ?"

"मुझे फ़रीदा ने कहा कि अपनी मुराद माँगो, अवश्य पा जाओगी, तो मुझे हँसी आई। मैंने सोचा कि यदि बाबा मेरी मुराद भी न जान सकेंगे तो पूरी किस तरह कर सकते हैं? उसके बाद मैं सचमुच यही सोच रही थी कि मेरे जीवन में किस चीज़ की कमी है? मैं पैसे माँगने नहीं आयी थी, नौकरी माँगने नहीं आयी थी। मैं स्वयं नहीं जानती थी कि मैं क्या चाहती हूँ। उसके बाद मैं क़ुरान के पाठ सुनने लगी और मैंने आँखें बन्द कर लीं।"

"बाबा ने तुम्हें वह चीज़ दिखा दी, जिसकी कमी अपने जीवन में तुम महसूस कर रही हो। तुम्हें उन्होंने, सकून क्या होता है, यह दिखा दिया। उनकी याद में तुम्हें हमेशा ही शान्ति मिला करेगी। सच, तुम बहुत ही भाग्यवान हो। पहली बार में ही तुम अपनी मुराद पा गईं।"

"और वह भी बिना माँगे ही पा गई!" फ़रीदा ने कहा।

माधवी कुछ न बोली, उनकी बातें सुनती रही। उसे आश्चर्य लग रहा था कि आते समय साथ विश्वास भी न लायी थी। किन्तु साथ जाने क्या-क्या ले जाएगी!

हाजी मलंग से लौटने के बाद माधवी पहले से भी अधिक मौन रहने लगी। हाँ, गुरुवार का दीप जलाना वह कभी न भूलती।

२९

टेलीफोन की घंटी बजते ही माधवी के हाथ अभ्यासानुसार उसकी ओर बढ़ गए। अपनी कोमल आवाज़ में उसने कहा, "हलो?"

जवाब में उसने थामस साहब की आवाज़ सुनी।

"कहिए।"

"पार्ट-टाइम काम के लिए समय होगा तुम्हारे पास?"

"तनख्वाह क्या होगी ?"

"तुम्हारे लिए पचहत्तर रुपये।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि यदि स्वयं आना चाहो तो पचहत्तर रुपये और यदि किसी और को भेजना हो तो पचास रुपये।"

"काम कितना होगा ?"

"शाम को साढ़े पाँच से साढ़े छः तक। सवेरे चाहो तो नौ से दस तक।"

"कब से आना होगा ?"

"आज ही से।"

"अच्छी बात है, मैं आ जाऊँगी।"

फोन बन्द करके माधवी ने दूसरा नम्बर जोड़ लिया, "हलो ! सेठजी हैं ?"

"नहीं।"

"मुन्शीजी को बुलाइए।"

"हलो !"

"हाँ मुन्शीजी, मैं माधवी बोल रही हूँ। मुझे अफ़सोस है कि मैं आज से नहीं आ सकती।"

"क्यों ?"

"समय नहीं मिलता। मैंने सेठजी से कल ही कह दिया था।"

"अच्छी बात है।"

"दूसरी टाइपिस्ट की आवश्यकता हो तो भेज सकती हूँ।"

"हाँ, ज़रूर-ज़रूर !"

"ठीक है। शाम तक भेज दूँगी।" फोन बन्द करके माधवी ने तीसरा नम्बर जोड़ा।

"हलो, मिस शरद से बात कर सकती हूँ ?"

"एक मिनट।"

"हलो !"

"ओह, शरद ? क्या हाल है ?"

"बस, चल रहा है। मेरे काम का कुछ हुआ ?"

"उसी के लिए तो फोन किया है। मैंने अपना शाम का काम छोड़ दिया है। तुम चाहो तो जा सकती हो। उन्हें आवश्यकता है।"

"कितनी तनख्वाह मिलेगी ?"

"पचास रुपये।"

"तो आज ही चली जाऊँगी। तुम्हें कोई और काम मिल गया ?"

"हाँ, पचहत्तर रुपये का।"

"वाह, लकी हो तुम !"

"अच्छा, मिल कब रही हो ?"

"कल आऊँगी दोपहर में।"

"अच्छी बात है।"

और माधवी अपनी मशीन पर टप-टप काम करने लग गई। इस प्रकार वह कई जगह काम कर चुकी थी। केवल पैसे के लिए ही तो उसे नौकरी करनी थी। फिर क्यों न जहाँ अधिक पैसे मिलें, वहीं काम करे ? पचास और पचहत्तर में अन्तर कम तो नहीं था।

शाम को माधवी थामस साहब के दफ़्तर जा रही थी कि मोड़ पर उसने घोष बाबू को देखा। उसका क़दम आगे न बढ़ सका। वह भय-भीत-सी उन्हें देखती रही, उनकी पीठ ताकती रही। आज वे अकेले नहीं थे। उनके साथ वह कौन थी, वह दौड़कर देखना चाहती थी। किन्तु नहीं। ऐसी मूर्खता उसने नहीं की। वहीं से उसने दोनों को टैक्सी में बैठते देखा। वह झट वहाँ से थामस साहब के दफ़्तर की ओर चल पड़ी।

थामस साहब ने उसे काम समझा दिया। माधवी फ़ौरन ही काम में जुट गई। घोष बाबू के अचानक साक्षात्कार ने आज उसे विचलित नहीं किया था। हाँ, उस दृश्य को वह बार-बार चारों ओर से देख रही

थी। थामस साहब चुपचाप अपनी छोटी मशीन पर टाइप कर रहे थे।

साढ़े छः बजे थामस साहब ने काम बन्द कर दिया। माधवी ने उनका अनुकरण किया। दोनों नीचे उतर आये। सन्ध्या का समय बीत चुका था। रास्ते पर कुछ अन्धकार छाया हुआ था। माधवी थक गई थी। थामस साहब भी देख रहे थे कि माधवी अपनी शक्ति से अधिक काम कर रही है।

"चलो, तुम्हें स्टेशन पहुँचा आऊँ।"

"नहीं, पहले चाय पियेंगे।"

"तो आओ।"

दोनों एक शान्त जगह जाकर बैठ गए।

"माधवी, तुम बहुत ही कमज़ोर हो गई हो। इतना अधिक काम क्यों करती हो?"

"तो मेरे घर का खर्च कौन चलाएगा?"

"क्या तुम ही बड़ी हो घर में?"

"हाँ। और मेरा छोटा भाई पढ़ रहा है।"

"तो कम-से-कम अच्छी खुराक तो तुम्हें लेनी चाहिए। चाय पीने के बजाय दूध पिया करो।"

माधवी उनका गम्भीर चेहरा देखकर हँसने लगी। थामस साहब ने भी मुस्करा दिया।

उस दिन माधवी ने उनके कहने पर दूध पी लिया।

"कल से दफ़्तर में दूध मँगाकर रखूँगा। हूँ!"

"लेकिन पैसे मेरे लगेंगे।"

"घबराओ मत। तनख्वाह से काट लूँगा।"

दोनों हँस पड़े।

३०

माधवी के पैर एक जगह टिकते न थे। फ़ोर्ट की कोई गली ऐसी न थी, जहाँ उसने काम न किया हो। चुटकियों में वह अपना काम छोड़ देती और उसे नया काम मिलने में देर भी न लगती। इसके सम्बन्ध में किसी को कुछ बताना वह ज़रूरी न समझती। आजकल माधवी एक अपढ़ सेठजी के यहाँ काम कर रही थी। पत्र-व्यवहार का काम वही करती थी। विश्व के सभी महत्त्वपूर्ण देशों में उसके पत्र पहुँचते थे। सेठजी पत्रों को देख-भर लेते और हस्ताक्षर कर देते थे। उन्हें माधवी पर पूर्णतया विश्वास था और वे उसे किसी भी हालत में खोना न चाहते थे।

माधवी को मैट्रिक में फ़स्ट क्लास मिला था। वह कॉलेज जाने को उत्सुक थी। उसने सेठजी से कहा, "मैं कॉलेज में दाख़िल हो रही हूँ।"

"क्यों?"

"मुझे वजीफा मिल सकता है। मेरी आगे पढ़ने की इच्छा है।"

"तो क्या काम छोड़ दोगी?"

"जी नहीं, कॉलेज दस बजे तक रहूँगी। ग्यारह बजे तक यहाँ आ जाऊँगी।"

"लेकिन अब तुम्हें आगे पढ़कर क्या करना है?"

माधवी को क्रोध आ गया। अपने पिता से भी उसने पूछा न था, न उनकी अनुमति की उसे चिन्ता ही थी और यह सेठ उससे कहता है कि आगे पढ़कर क्या करना है?

"माधवी बहन, आपका काम मुझे अति पसंद है। मैं आपके वेतन में और भी वृद्धि करूँगा। लेकिन आप कॉलेज का विचार छोड़ दीजिए।"

माधवी ने सोचा, मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक। सेठजी अपना दिमाग़ कहाँ तक दौड़ा सकते हैं!

"और, माधवी बहन, आप अपने काम में इतनी निपुण हैं कि आपको

अधिक पढ़ने की आवश्यकता ही नहीं।"

"लेकिन मैं केवल टाइपिस्ट ही बनी रहना नहीं चाहती।"

"तो क्या विजयलक्ष्मी पंडित बनोगी?" और एक कुत्सित हँसी उनके होंठों पर खेलने लगी।

अब तो माधवी का चुप रहना असंभव था। उसने कहा, "विजयलक्ष्मी पंडित कोई खास बड़ी तो नहीं हैं। पंडित नेहरू की बहन हैं, इसीलिए आज सब उन्हें जानते हैं। मैं तो केवल अपनी योग्यता से आगे बढ़ूंगी।··· आप आज सोचकर मुझे बता दीजिए, वरना मुझे काम छोड़ देना होगा।"

सेठजी मुँह ताकते रह गए। वे जानते थे कि माधवी के घर की हालत ठीक नहीं है। वह तीन सौ रुपये का काम सहज ही न छोड़ेगी। लक्ष्मी के उपासक सेठजी मन की अमीरी से परिचित न थे। माधवी जानती थी कि वह जहाँ जाएगी उसे काम मिल जाएगा। वह शार्टहैंड जानती है, बोलना-चालना जानती है। अच्छा-खासा अनुभव है। यदि कोई उसे अपमानित करे, तो उसके काम की उसे तनिक भी परवाह नहीं। फिर चाहे परिणाम बुरा ही क्यों न हो।

शाम के साढ़े पाँच बजते ही माधवी थामस साहब के दफ़्तर पहुँची। थामस साहब ने सचमुच दूध मँगा लिया था। चपरासी गरम दूध ले आया। माधवी ने दूध क्या पिया, मानो शक्ति ही पी हो। थामस साहब प्रूफ़ देख रहे थे। माधवी भी अपने काम में मग्न हो गई।

उस दिन शाम को घर पहुँचकर माधवी ने देखा कि सेठजी बैठे हुए हैं। उसके माता-पिता भी उनके साथ बैठे हुए थे। चाय का सामान अभी भी मेज़ पर पड़ा हुआ था। सबके चेहरे गंभीर थे, मानो कोई आफ़त आ पड़ी हो। माधवी को आश्चर्य लग रहा था और भय भी कि न जाने इन लोगों में क्या-क्या बातें हुई हैं।

"आओ माधवी बहन! इतनी देर से घर पहुँचती हो? कहाँ रहीं अब तक?"

माधवी हक्की-बक्की-सी देखती रह गई। आख़िर घरवाले जानते

तो हैं कि वह शाम को दूसरी जगह काम करने जाती है। फिर क्यों उन्होंने उसके देर से आने का कारण सेठजी को नहीं बताया ? क्या वह आवारागर्दी करने गयी थी ?

उसने कोई उत्तर नहीं दिया। अन्दर चली गयी। उसकी माँ भी उसे चाय देने के लिए अन्दर आ गई। माधवी चाय पीते-पीते सुन रही थी।

"मैंने तो माधवी को समझाया था, अब आप समझाकर देखिए।"

कुछ देर तक शान्ति छायी रही।

"कॉलेज बड़े लोगों के लिए ठीक है। हम और आप-जैसों का वहाँ क्या काम ?" सेठजी ने आपके साथ हम का प्रयोग करके अपने प्रशस्त मन का परिचय दिया।

माधवी भी अब बाहर आ गई। पिता ने कहा, "माधवी, कॉलेज जाना क्या आवश्यक है ?"

"हाँ, पिताजी !"

सेठजी ने विजयी दृष्टि से उनकी ओर देखा, मानो कह रहे हों, सुना ?

"लेकिन माधवी, इनका तो कहना है कि···" उनकी बात पूरी न हो सकी।

"पिताजी, मैंने जो-कुछ सेठजी से कहा है, उसमें मेरी ओर से कोई परिवर्तन नहीं होगा। मैं कॉलेज अवश्य जाऊँगी। इन्हें केवल एक घंटे की छुट्टी देनी है। इससे इनके काम में कोई अन्तर नहीं आएगा। इनका काम भी होगा और मेरी पढ़ाई भी।"

माधवी के पिता ने भी इसमें कोई बड़ी आपत्ति न देखी। किन्तु सेठजी अब अपनी बात समझाने लगे, "देखिए, मुझे तो कोई आपत्ति नहीं। किन्तु कॉलेज के बाद माधवी बहन थकी-माँदी काम करने आयेंगी तो इनसे काम ठीक से न हो सकेगा। और मैं तो तीन सौ की जगह साढ़े तीन सौ देने को तैयार हूँ।"

अब माधवी से रहा न गया, "लेकिन रुपया ही तो सब-कुछ नहीं है

न ? मेरी इच्छा पढ़ने की है, मैं पढ़ूंगी।"

सेठजी ने सोचा, कैसी मूर्ख लड़की है!

"देखो बेटी, हमें रुपये की आवश्यकता है। काम छोड़ देने से हमें ही असुविधा होगी। तुम बुद्धिमान हो। स्वयं सोच सकती हो।"

"हमें रुपये की आवश्यकता है और इन्हें टाइपिस्ट की। मैं अपनी बात पर अटल हूँ। मैं कॉलिज अवश्य जाऊँगी।"

"अच्छा तो मैं चला," सेठजी उठ गए।

माधवी किताब लेकर बैठ गई।

सेठजी और उसके पिता सीढ़ियों के पास बड़ी देर तक बातें करते खड़े रहे। कुछ देर में राज भी आ गया और पिताजी घर में आ गए।

"वह कौन था ?" राज ने पूछा।

"माधवी का सेठ है," माँ ने उत्तर दिया।

"तो आप उसे घर की बातें क्यों बता रहे थे ?"

"क्या बताया ?" माधवी की शंका अब बलवती हो गई।

राज चुप रहा। माधवी समझ गई।

"वह बड़ा अच्छा आदमी है। मैंने अपनी व्यथा उसे सुना दी तो क्या बुरा किया ?"

"लेकिन इसमें हमारे घर की इज़्ज़त का सवाल है। दीदी की हँसी होगी सब जगह।"

"राज, क्या बात है, मुझे भी तो बताओ!"

"कुछ नहीं, दीदी! पिताजी उन्हें सब बातें बता रहे थे।"

"ओह!" माधवी के स्वर में अपने पिता के प्रति घृणा थी। उसने कुछ कहा नहीं, किन्तु उसकी आँखों ने बहुत-कुछ कहा। उसे दुख नहीं हुआ, क्रोध आया। सारे शरीर में जैसे अंगारे रखे हों। नज़र पुस्तक पर गड़ी थी, किन्तु एक अक्षर भी दिखायी नहीं दे रहा था।

घर का सारा वातावरण कलुषित हो गया। पिताजी भी नाराज़ हो गए। उन्होंने राज से कहा, "अपनी इच्छा के लिए यह सबका नाश

कर देगी।"

"दूसरा काम मिल जाएगा।"

"कोई साढ़े तीन सौ रुपये नहीं देगा।"

"तो आपने उनसे यह नहीं कहा कि वह एक घंटे की छुट्टी दे दें ?"

"छुट्टी देना वह नहीं चाहता। उस पर लक्ष्मी की कृपा है। उसे दूसरी स्टेनो मिल जाएगी। लेकिन माधवी तो बेकार हो जाएगी। हमारे फ़ाक़े पड़ने लगेंगे।"

माधवी का मुँह अब खुल गया, "आपके कब फ़ाक़े हुए ? मैं कई बार काम छोड़ चुकी हूँ। लेकिन हर महीने आपके पास पैसे आ जाते हैं या नहीं ?"

अब पिताजी भी चिढ़ गए। उनकी बेटी और उनका कहना न माने ! माधवी से उन्होंने झट से कहा, "जाने कहाँ से लाती हो पैसे !"

"पिताजी !" माधवी का स्वर क्रोध के कारण पतला हो गया।

"दीदी, तुम चुप रहो, नहीं तो अभी तमाशा खड़ा हो जाएगा।"

अब माँ ने कहा, "अपनी इज़्ज़त अपने हाथ होती है, बेटी ! उन्होंने तुम्हें इतनी देर से घर आते देखा, वे क्या सोचेंगे ?"

"लेकिन माँ, मैं शाम को दूसरा काम करने जाती हूँ। इससे पहले कैसे आ सकती हूँ ? घर के खर्चे का कभी हिसाब लगाया है ?"

फिर एक बार सब शान्त हो गए। राज ने सोचा, पिताजी को समझाना कठिन है। दीदी भी चुप न रहेगी। आज फिर इस घर में कलह घुस आया है।

माधवी ने सोचा, कितने निर्दयी हैं उसके माता-पिता ! सब अपने स्वार्थ की सोच रहे हैं। इनका स्वार्थ है पैसा, सेठजी का स्वर्थ है काम। इन स्वार्थों की आग में वह अपनी इच्छाओं की आहुति क्यों दे ? कभी नहीं। कल ही वह सेठजी का काम छोड़ देगी। घर में कलह अवश्य होगा। कोई उपाय नहीं। आजीवन वह टाइप नहीं करेगी। उसे इस पेशे से नफ़रत है। वह कुछ अवश्य बनेगी, अवश्य।

विलम्बित

३१

अब माधवी होस्टल में रहने लगी। अकेले एक कमरे में उसे आनन्द आता। किसी कलह की आशंका न थी। निश्चिन्त बैठकर पढ़ सकती थी। हर महीने वह अपने घर पैसे भेजती। स्वयं उसके पिताजी कभी-कभी उससे मिलने आ जाते। राज न आता। माधवी इसका बुरा न मानती। सेठजी का काम उसने एक सप्ताह के लिए ही छोड़ा था। उन्होंने उसके कॉलिज पत्र भेजकर उसे दुबारा बुला लिया था। माधवी ने भी उसमें कोई बुराई नहीं देखी। सेठजी ने अपना वचन निभाते हुए माधवी का वेतन बढ़ा दिया था। थामस साहब का काम वह होस्टल लाकर करती।

उस दिन शनिवार था। माधवी सवेरे से ही न जाने क्यों प्रसन्न थी। उसने अपनी लाल साड़ी बाँधी और पीले रंग का ब्लाउज़ पहना। केश भी कुछ ध्यान से बाँधे। फिर चाय पीने नीचे आयी। उस दिन वह अकेले बैठना नहीं चाहती थी। जाकर बड़ी मेज़ पर बैठ गई, जहाँ बहुत सारी लड़कियाँ बैठी थीं। चाय आ गई। माधवी ने देखा कि एक लड़की बार-बार उसकी ओर देख रही है। उसने मुस्करा दिया। वह अपनी जलपान की तश्तरी उठाकर माधवी के पास आ गई।

"आज तुम बहुत ही अच्छी लग रही हो।"

"अच्छा !" माधवी का खून गालों पर दौड़ आया।

"मेरा नाम पूरवी है।"

"मेरा माधवी।"

"तुम सर्विस करती हो ?"

"हाँ।"

"अभी जाना है ?"

"नहीं, नौ बजे।"

"तो चलो मेरे कमरे में।"

"चलो," माधवी का मनोरथ पूर्ण हुआ। उसे साथी मिल गया—ऐसा साथी जो आगे चलकर माधवी को सही सलाह दे सके।

दोनों चाय पीकर वहाँ से पूरब के कमरे में चली आयीं।

"आओ माधवी! ये बालियाँ कान में पहन लो, अच्छी लगेंगी।" उत्तर की अपेक्षा किये बिना ही वह बालियाँ पहनाने लगी।

माधवी ने कुछ कहा नहीं।

सचमुच बालियों से माधवी और भी खिल उठी। अब माधवी ने अपनी नयी सहेली की ओर ध्यान से देखा। उसका रंग उजला था। कुछ लम्बे कद की थी और सुन्दर नहीं तो आकर्षक अवश्य थी। प्रत्येक अदा से पता चलता था कि वह अमीर घर की लड़की है। कमरे का सामान भी इस बात की हामी भर रहा था।

माधवी कुछ देर में अपने कमरे में लौट आयी। आते ही वह शीशे के सामने खड़ी हो गई। बड़ी देर तक वह देखती रही। न जाने क्या सोचा उसने। अपना बैग उठाकर वह गुनगुनाने लगी—'यह सागर यह हलकी चाँदनी, यह हवा, जी में आता है यहीं मर जाइए—आइए आ जाइए आ जाइए।' मास्टर मदन की गजल आज वर्षों बाद उसे याद आई थी। सचमुच, गाना तो वह भूल ही गई थी।

आज उसे थामस साहब ने कुछ अधिक काम होने के कारण बुलाया था। जब उनके दफ्तर पहुँची तो पल-भर के लिए उन्होंने अपनी नज़र उस पर गड़ा दी।

"आज क्या बात है, माधवी?"

"आपको नहीं पता?"

"मैं क्या जानूँ?"

"अच्छा जाने दीजिए। मुझे छुट्टी चाहिए। आज काम करने की इच्छा नहीं है।" आज माधवी नहीं, उसका यौवन बोल रहा था।

मस्ती से उसका शरीर झूम रहा था।

"कहाँ जाओगी ?"

"कहीं दूर।"

"अकेले ?"

"नहीं, एक हमजोली के साथ।"

"कौन है वह भाग्यवान ?"

"इस समय वह मेरे सामने ही बैठा है।"

दोनों खूब ज़ोर से हँस पड़े और अपने दूर के सफ़र पर चल पड़े।

"कहाँ चलेंगे, माधवी ?"

"बताया तो, कहीं दू···र।"

"पास रहकर ही तो दूर जा सकते हैं ?"

"ना-ना, दूर जाकर फिर और दू···र जायेंगे।"

"तो चलो। अरे, यह बस तो चली गयी !"

"जाएगी कैसे ?" कहकर माधवी चलती बस में चढ़ गई। उसके पीछे थामस साहब भी चढ़ गए। कंडक्टर ने हँसकर दोनों की ओर देखा।

"टिकट कहाँ का लेना है, माधवी ?" थामस साहब का होश ठीक था।

"जहाँ तक बस जाएगी वहाँ तक का।"

"बस तो जूहू जा रही है ?"

"बस, हम भी वहीं जा रहे हैं।"

"बस दौड़ रही थी। साथ ही माधवी का मन, उससे आगे थामस साहब की कल्पना, और उससे भी कहीं आगे कंडक्टर का अन्दाज़।

जुहू पहुँचते ही दोनों ने एक बढ़िया होटल में भोजन का प्रबन्ध किया और समुद्र-किनारे घूमने गये। आज माधवी किसी को बात करने का मौका ही न दे रही थी। अपने स्वप्निल स्वर में वह थामस साहब को न जाने क्या-क्या सुना रही थी। थामस साहब अपने-आपको काबू में रख रहे थे। उन्होंने अपनी ओर से कुछ कहा नहीं। दूध का जला···

था। जिसे अपने माता-पिता की सहानुभूति प्राप्त न हो सकी, उसे इस अभाव की पूर्ति के लिए एक साथी आवश्यक था। माधवी की यह हार्दिक इच्छा थी कि थामस साहब की मैत्री का कभी अन्त न हो। किन्तु उसका एक मन इस विचार को घुड़क रहा था और दूसरा उनकी जीवन-संगिनी बनकर रानी के-से जीवन की झाँकी देख रहा था।

उन्होंने कहा था, "माधवी, तुम्हारा धर्म मैं कदापि तुमसे नहीं छीनूंगा। तुम अपनी इच्छानुसार उसका पालन कर सकती हो।"

"असंभव, थामस, असंभव !"

"माधवी, क्या अब तक तुम मुझे पहचान न सकीं ?"

"थामस, पुरुष विवाह से पहले जो होते हैं, वह विवाह के बाद नहीं रहते। आज हम एक-दूसरे के मोह से अपना धर्म छोड़ सकते हैं, किन्तु कुछ वर्षों बाद जब उसकी आवश्यकता होगी, तब कहाँ उसे ढूंढने जाएंगे ?"

"तुम अभी अपनी संकुचित विचारधारा में बह रही हो, माधवी ! कोई बात नहीं। मैं उस दिन की प्रतीक्षा करूँगा, जब तुम्हारे विचार अधिक सुदृढ़ हो जायेंगे।"

"नहीं, थामस, जहाँ तक धर्म का प्रश्न है मैं आधुनिक विचारों को कभी भी अपना न सकूंगी। मुझसे रुष्ट मत होना, थामस ! जानते हो, मैं तुम्हें बहुत···" और वह उनसे लिपट गयी थी।

माधवी ने सोचा, इस एक शान्ति के लिए, इस सकून के लिए क्या वह अपना धर्म नहीं छोड़ सकती ? थामस ने सोचा, क्यों माधवी इस आनन्द-भरे जीवन का अन्त कर रही है ? क्यों इसे मुझ पर विश्वास नहीं ?

माधवी का मन फिर उस कमरे में लौट आया। उसने सोचा, यदि पत्नी अपना सब-कुछ समर्पण न कर दे तो वह अपने पति को सुख ही क्या दे सकती है ? मैं अपना धर्म छोड़कर उन्हें सब-कुछ दे दूंगी। किन्तु मेरी सन्तान ? उनका क्या होगा ? वे तो ईसाई ही कहलायेंगे। उसने पुस्तक रख दी।

जिस थामस के कारण उसके जीवन में सुख और शान्ति थी; जिसने

अपने सहवास से उसके दुखों को दूर किया था; जिसने उसे आँख की पुतली की तरह सँभाला था, उसे ही क्या यह दुष्ट माधवी दूध से मक्खी की तरह निकालकर दूर फेंक देगी ?

माधवी हद से ज़्यादा बेचैन होती जा रही थी। उसकी समझ में न आ रहा था कि वह क्या करे। वह बार-बार थामस के मानसिक क्लेश को याद करके दुखी हो रही थी। उनका दुखी चेहरा सामने आते ही उसकी आँखें भर आती थीं। अन्त में उसने अपना कमरा बन्द किया और पूरबी के कमरे में चली गयी।

"आओ, माधवी।"

माधवी बैठ गई, किन्तु उससे आँख मिलाने का साहस न हुआ।

"आज किस गम्भीर समस्या पर विचार हो रहा है ?"

"विवाह की", माधवी ने कहा और तुरन्त ही पछतायी।

"तो ऐसा मुँह क्यों बना है ?"

"देखो पूरबी, तुम्हें मुझसे अधिक अनुभव है। तुम बताओ, मुझे थामस से विवाह करना चाहिए या नहीं ?"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"जिस सम्बन्ध के विषय में तुम इतनी परेशान होकर सोच रही हो, वह कभी सुखकर नहीं होगा।"

"क्या मतलब ?"

"जब कोई तुम्हारे सामने विवाह का प्रस्ताव रखे और तुम उसे फ़ौरन स्वीकार कर सको, तो मान लो कि तुम्हारी ओर से कोई आपत्ति नहीं है। और यदि कोई छोटी-मोटी बात आ भी जाय, तो उसे हटाने की क्षमता भी तुममें होगी।"

माधवी ने सोचा, पूरबी ने कितनी दूर की बात सोच ली।

"लेकिन, पूरबी, मैं उन्हें बहुत···"

"मैं जानती हूँ, माधवी ! किन्तु इस बहुत से दूसरा बहुत बड़ा लगता

है, जो तुम्हें परेशान कर रहा है। भलाई तो इसी में है कि तुम यह विचार छोड़ दो। इस समय अविचार करोगी तो दोनों का जीवन नष्ट करोगी।"

"लेकिन, पूरबी, उन्हें कितना दुख होगा, इसकी तुमने कल्पना की है ?"

"दुख से ही तो जीवन सह्य है। दुख के ही कारण तो महान् कला का निर्माण हुआ है। जिनके जीवन में ऐसी महान् निराशा नहीं आयी, वे एक अपूर्व अनुभूति से वंचित हैं।"

"लेकिन, पूरबी..."

"आज तुम्हारे लेकिन का अन्त नहीं होगा। चलो, हम फ़िल्म देखने चलते हैं।"

"नहीं-नहीं, पूरबी, तुम समझती नहीं।" माधवी ने सोचा कि पूरबी माधवी की बात को महत्त्व नहीं दे रही है।

"लो ! तो तुम यह कहना चाहती हो कि मैंने कभी प्रेम ही नहीं किया ? प्रेम करना इतना सरल है कि हम एक के बाद एक प्रेम-पात्र पा ही जाते हैं। और इनमें शायद कोई एक पात्र ऐसा होता है, जिसे हम छोड़ नहीं सकते। और वहीं प्रेम का अन्त विवाह के रूप में होता है। वह हास-विलास, वह बिना पर के परिन्दों की तरह उड़ना समाप्त हो जाता है। यहीं पर हम अपने हमजोली की त्रुटियाँ देखने लग जाते हैं और उनको लेकर एक-दूसरे से लड़ते हैं। किन्तु विवाह के बन्धन तथा हमारे संस्कार हमें दूसरे प्रेम-पात्र की खोज से रोक लेते हैं। कुछ देर बाद पति-पत्नी फिर एक हो जाते हैं, प्यार की सौगंध खाते हैं। और, माधवी, इस मिलन में अपूर्व आनन्द होता है—वही जो प्रथम मिलन में होता है।"

"तुम्हारा अनुभव ग़ज़ब का है।" माधवी ने कहा।

"क्या तुम नहीं जानतीं कि मेरा विवाह हो चुका है ? मेरे पति अमरीका गये हुए हैं। उनकी यह इच्छा है कि मैं और भी आगे पढ़ूं।"

"लेकिन तुम तो..."

"अब मैं तुम्हारे लेकिन का समर्थन नहीं कर सकती। चलो, नहीं तो टिकट नहीं मिलेंगे।"

३२

वही होता है जो मंजूरे-खुदा होता है। थामस के प्रस्ताव को माधवी ने दुत्कार दिया और उनसे मिलना-जुलना भी बन्द कर दिया। इससे उसके जीवन में फिर एक बार निराशा छा गई। पढ़ाई की ओर ध्यान देना चाहती थी, किन्तु वह असम्भव-सा था। पुस्तक खोलकर देर तक वह थामस के साथ बिताया हुआ समय याद करके रोया करती। सौ बार उसने उनसे मिलने का प्रयत्न किया, किन्तु वहाँ तक जाने का साहस ही न होता। वह अपने-आपको दोषी समझने लगी, अपने को धिक्कारने लगी।

थामस, तुम्हें दुखी करने का मुझे कोई अधिकार नहीं था। मैं स्वयं अपने से नाराज़ हूँ।...मैंने तुमको धोखा दिया, कष्ट दिया। लेकिन, देखो, मैं भी दुखी हूँ। अकेली बैठकर रो रही हूँ। माँ-बाप होते हुए भी एक अनाथ की भाँति असह्य जीवन का बोझ ढो रही हूँ।... एक पूरबी है, लेकिन वह क्या सान्त्वना दे सकेगी? वह तो केवल तुमसे मिल सकती है। मैं तुमसे कैसे मिलूँ? जी में आता है कहीं भाग जाऊँ। किन्तु, थामस, मेरा मन ही तो मेरा वैरी है। उससे कैसे छुटकारा पाऊँगी? वह नाना प्रकार की कल्पनाएं करता रहता है और मुझे पागल बनाता है।'

"माधवी।"

"कौन?"

"दरवाज़ा खोलो, माधवी।"

पूरबी ने कमरे में प्रवेश किया और कहा, "माधवी, हम पिकनिक जा रहे हैं। तुम्हें लेने आयी हूँ। चलोगी?"

'मेरी तो कहीं जाने की इच्छा नहीं," माधवी ने मुंह फेरकर आंख पोंछ ली।

"चलकर देखो तो! तुम्हारा जी अवश्य बदल जाएगा। सब मेडिकल के लड़के-लड़कियाँ हैं।"

माधवी अकेले रहने से डरती थी। पूरबी के साथ जाने के लिए जैसे वह बाध्य हो गई।

माधवी ने फिर अपना पुराना मौन धारण कर लिया था। उससे भी किसी ने बात तक न की। केवल पूरबी के पीछे-पीछे उसकी छाया की तरह वह जा रही थी। किन्तु दोपहर तक उसने अपने मौन का अन्त कर दिया था। बातें शुरू करते ही उसकी हँसी लौट आई और साथ ही उसकी आँखों की चमक भी। उस चमक ने अपना काम कर ही डाला। माधवी के अनजाने ही एक व्यक्ति उस पर मोहित हो गया।

संध्या-समय एक खेल खेला जा रहा था। एक छोटा-सा काग़ज़ में बँधा हुआ डिब्बा था। लड़के और लड़कियाँ वर्तुलाकार बैठे थे। संगीत बजते ही डिब्बा एक के बाद दूसरे के पास जाता। संगीत रुकते ही डिब्बा जिसके हाथ रहता, उसे ऊपर का पुर्जा निकालना पड़ता। इस छोटे काग़ज़ के पुर्ज़े पर कोई हास्यास्पद सज़ा लिखी होती। उस पर अमल करना पड़ता। माधवी भी इस खेल में रंग गई। अबकी सज़ा मिली अनवर को—'अपने मनचाहे साथी का हाथ पकड़कर उसे दूर ले जाओ।'

अनवर साहब डॉक्टर थे। अभी-अभी विलायत से लौटे थे। बड़ी उत्सुकता से उन्होंने अपनी दृष्टि सबके ऊपर दौड़ायी। माधवी भी उन्हें देख रही थी। उस पर नज़र पड़ते ही उन्होंने झुककर उससे उठने की विनती की। माधवी को इसकी ज़रा भी आशंका न थी। वह कानों तक लाल हो आई। अनवर ने उसका हाथ पकड़ लिया। दोनों पास के पीपल के पीछे चले गये। अनवर ने धीरे से कहा, "मेरा नाम है अनवर। अब अपना बताओ।"

"माधवी," अधिक कुछ उससे न कहा गया। वह किसी से बात

करना नहीं चाहती थी। किन्तु अनवर बहुत ही सुन्दर था। उसका चाल ढाल, बातें करने का तरीक़ा बहुत ही सौम्य था।

इस घटना ने माधवी के अहं को गुदगुदाया। क्यों नहीं ? उस जैसी देखने में साधारण लड़की यदि अनवर को आकर्षित कर सकती है तो क्या यह बड़ी बात नहीं है ? अवश्य है।

माधवी और पूरबी संध्या को पीछे रह गईं। सबने अपनी-अपनी जगह कार में ले ली थी। मीना ने पूरबी को अपने पास बुला लिया और माधवी को अनवर ने अपनी गाड़ी में ले लिया। दोनों गाड़ियाँ अब शहर की ओर दौड़ने लगीं। अनवर गाड़ी चलाने में भी अपना कमाल दिखा रहा था। जगह कम होने के कारण माधवी को अनवर से सटकर बैठना पड़ रहा था। माधवी अनवर की ओर देखती तो उसकी नज़र वह अपने पर ही जमी पाती। उसे हँसी आई। धीरे-धीरे वह अपनी मनपसन्द ग़ज़ल गुनगुनाने लगी, "यूँ न रह-रहकर हमें तड़पाइए, आइए आजाइए आजाइए…"

"ज़रा ऊँचे गाओ," अनवर ने कहा।

माधवी की ऊँची आवाज़ सब सुनने लगे। अनवर का ध्यान बराबर हर तरफ़ दौड़ रहा था। गाड़ी चला रहा था, ग़ज़ल सुन रहा था और माधवी के कटाक्षों का उत्तर भी दे रहा था। उसकी गाड़ी बिना आवाज़ किये जा रही थी, जैसे पानी पर हंस तैरता हो।

माधवी गा रही थी, "मेरी दुनिया मुन्तज़िर है आपकी, अपनी दुनिया छोड़कर आजाइए…"

अन्तिम, "जी में आता है यहीं मर जाइए…"

गाड़ी अचानक रुक गई। अनवर ने कहा, "खुदा के वास्ते ऐसा मत कहो!"

सब हँसने लगे। गाड़ी फिर चलने लगी। अनवर हँसोड़ था, किन्तु चेहरा गम्भीर रहता। माधवी ने अन्य किसी की ओर देखा तक नहीं। बस, अनवर से ही उसे मतलब था।

"कुछ और सुनाओ !" अनुरोध की आवाज़ गूंज उठी।

माधवी फिर गाने लगी, "कोयलिया मत कर पुकार, करेजवा लागे कटार..."

अख्तरी बाई की ठुमरी माधवी ने ऐसे गायी, मानो वह सचमुच ही कोयल की विनती कर रही हो। खूब रंग जमने लगा माधवी की महफिल का और उसके साथ उसके प्रणय का। एक के बाद एक माधवी गा रही थी। ग़ज़ल, ठुमरी, दादरा, कजरी जो याद था, सब सुना रही थी। दूसरी गाड़ी में पूरवी चिन्तित थी। न जाने माधवी का क्या हाल होगा ? कहीं रो न रही हो। उसे अपने साथ ले लेती तो अच्छा होता। आधे रास्ते में चाय के लिए गाड़ियाँ रुकीं। माधवी की ग़ज़ल अभी समाप्त न हुई थी। कोई नीचे नहीं उतरा। पूरबी दौड़कर आयी। उसने पहले तो सोचा कि रेडियो लगा है। किन्तु जब पास आ गई तो अवाक् सुनने लगी। माधवी के गले से सुर निकल रहे थे, "बदल जाये वफ़ा तो इश्क पर इलज़ाम आता है..."

ग़ालिब की ग़ज़ल। तिस पर माधवी का दिलोजान से गाना और पूरबी का उसे सुनना ! त्रिवेणी संगम था।

ग़ज़ल समाप्त होते ही सब होटल पहुँच गये। माधवी पूरबी के साथ जाकर बैठ गई। पूरबी सोच रही थी—आज सवेरे तक रो रही थी, और अब यह क्या ? अतीत को भुलाने में क्या इतना कम समय लगता है ? किन्तु उसने माधवी से कुछ न कहा। बस, उसके गाने की प्रशंसा की।

"माधवी, तुम तो बहुत अच्छा गाना जानती हो।" उसका हाथ पकड़कर पूरबी ने कहा।

"हाँ, मैंने अपनी बुआ से सीखा था। मेरे पिताजी को बहुत पसन्द है मेरी आवाज।"

"अब मैं भी तुम्हारे साथ बैठूंगी। गाओगी न ?"

"अवश्य !"

किन्तु चाय के बाद रंग न जम सका। माधवी जो अनवर के लिए गा सकती थी, वह पूरवी के लिए गाना असम्भव था। फिर भी उस दिन की रौनक का श्रेय माधवी के संगीत को ही मिला। होस्टल से कुछ दूर गाड़ियाँ रुक गईं। पूरबी और माधवी उतर गईं। नमस्कार की विधि समाप्त कर माधवी ने अनवर की ओर देखा। वह भी इसी ताक में था।

"अच्छा, अनवर साहब!"

"अनवर साहब मत कहो!"

"तो?"

"सिर्फ़ अनवर कहो।"

"मंजूर।"

"माधवी!"

"हूँ।"

"क्या मैं तुमसे मिलने होस्टल आ सकता हूँ?"

उसकी धीमी और सौम्य आवाज़ ने माधवी को कब का अपना लिया था। उसने मुस्कराकर अनुमति दे दी। अनवर अपनी गाड़ी की ओर चला गया।

अकेले कमरे में लेटते ही अनवर की स्मृति लुप्त हो गई। पिकनिक की थकावट तथा थामस की याद ने फिर उसे निराशा के विश्व में ला छोड़ा। वह बिना कपड़े बदले ही लेटी रही। किन्तु पूरबी कब उसे लेटने की इजाज़त देती? वह कपड़े बदलकर आ भी गई।

"क्यों माधवी, यह मुँह क्यों बनाया है?"

माधवी चुप रही।

"माधवी, खाने की घंटी में केवल तीन मिनट की देर है। कपड़े बदल लो, नहीं तो यूँही चलना पड़ेगा।"

माधवी ने उठकर कपड़े बदल लिये। आधा घण्टे पहले माधवी कितनी अच्छी लग रही थी! अब वह रोहिणी की भाँति लग रही थी।

मन ही सारे रोगों की जड़ है। पूरबी को कुछ समाधान भी हुआ। यदि माधवी थामस को इतनी अल्पावधि में भुला बैठती, तो वह उसकी आँखों से गिर जाती। माधवी थाल जूठा कर उठ गई। पूरबी ने भोजन कर थाल से कुछ सूखी चीज़ें उठा लीं। दोनों ऊपर आ गईं। पूरबी ने चाय बनायी। वह माधवी को प्रत्येक व्यक्ति का परिचय दे रही थी।

"अनवर भी खूब गाता है, किन्तु क्लासिकल। अपनी पढ़ाई के कारण उसने गाना छोड़ दिया है, नहीं तो बम्बई को इसकी आवाज़ पर नाज़ होता!"

"पूरबी, मुझे आज अपने से घृणा हो रही है।"

"क्यों, माधवी?"

"देखो, आज सवेरे तक मेरे हृदय में थामस-ही-थामस था, लेकिन अनवर से परिचय होते ही मैं उतनी देर के लिए उसे भूल गई।"

"तो क्या अब रोते हुए बैठना है, पगली?"

"नहीं। किन्तु उनकी स्मृति में कुछ दिन तो बिना साथी के जीवन बिताती। फिर तो कोई कहता कि हाँ, सचमुच प्रेम था। लेकिन अब तो स्वयं मुझे सन्देह हो रहा है। पूरबी, मैं शपथपूर्वक कहती हूँ कि अभी तक मैं थामस से प्रेम करती हूँ। लेकिन न जाने क्यों···" आगे उससे कुछ कहा न गया। वह सिसकने लगी।

"माधवी," पूरबी उसके माथे पर हाथ फेरने लगी। उसे आज सच-मुच ही माधवी से सहानुभूति हो गई। उसी समय उसने कसम खाई कि वह माधवी के विषय में कभी ग़लत धारणा नहीं बनायेगी। उसने चाय के दो प्याले मेज़ पर रख दिए और अपने थाल से लायी हुई चीज़ें भी माधवी के सामने रख दीं। माधवी ने चाय ले ली, किन्तु खाने से इन्कार किया। पूरबी ने भी अधिक ज़ोर नहीं दिया।

उस रात माधवी बराबर थामस को स्वप्न में देखती रही। किन्तु सवेरे उसने देखा कि अनवर उसे जगा रहा है। वह चौंककर उठ बैठी। कोई नहीं था। वह अकेली थी। साथ ही कमरे का सन्नाटा था। छः बज

रहे थे। उठकर नहाने चली गई। नहाते समय उसे याद आया कि उस दिन सेठजी का टेंडर भेजना था। दफ्तर जल्दी जाना पड़ेगा। उसने उस दिन दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह अब भूल कर भी अनवर इत्यादि के झगड़े में न पड़ेगी। हाँ, अपना लेखन आरम्भ कर देगी।

३४

माधवी का निश्चय चार दिन से अधिक न टिक सका। उस दिन संध्या-समय वह अपने कमरे में बैठकर लिख रही थी कि चपरासी ने आकर कहा, "कोई विज़िटर हैं।"

"अच्छा," माधवी ने शीशे में देखा। कपड़े ठीक थे। नीचे उतर आई।

अप-टु-डेट अनवर हॉल में खड़ा था। दोनों ने हाथ जोड़ लिए।

"घूमने की ख्वाहिश हो तो चला जाय।" वही धीमी-मीठी आवाज़।

"चलिए," माधवी उसके साथ बाहर आ गई। अनवर ने गाड़ी का दरवाज़ा खोल दिया। माधवी बैठ गई। अनवर दूसरी तरफ़ से बैठ गया। मरीन ड्राइव की नीली सड़क पर अपनी नाक सीधी रखे गाड़ी दौड़ने लगी।

"आप उस दिन पार्टी में नहीं आयीं?"

"मैं सर्विस करती हूँ। चार बजे आना असम्भव था।"

"इतनी दूर क्यों बैठी हो?"

"जगह है इसलिए।"

अनवर हँसकर चुप रहा।

"कुछ गाइएगा?"

"मूड नहीं।"

"आपकी आवाज़ को रियाज़ की सख्त ज़रूरत है।"

"इतना समय किसके पास है, अनवर !"

"तो क्या सर्विस करना जरूरी है ?"

"अनिवार्य है।"

"ओह, आई एम सॉरी !"

फिर दोनों गाड़ी की हलकी घर्र-घर्र सुनने लगे। माधवी ने सोचा, अपने मालिक की तरह यह भी हलके-हलके बोलती है।

समुद्र-किनारे गाड़ी रुक गई। सूर्यास्त का समय था। दोनों वह अपूर्व दृश्य बड़ी तन्मयता से देखने लगे।

"दुनिया कितनी हसीन है, माधवी !"

"यह देखने वाले पर निर्भर है।"

"मानता हूँ," अनवर को माधवी की बातों से टपकती हुई निराशा ने दुखी किया। अनवर अपने-आपको सद्गृहस्थ मानता था। वह माधवी के प्रति आकर्षित हुआ था, और कुछ हद तक माधवी भी उसके पास आयी थी। वह यही चाहता था कि माधवी को वह अपनी दोस्ती से सुखी करे, अथवा उसका दुख भुलाने में सहायक हो सके।

"माधवी, अगले रविवार पूना चलोगी ?"

"देखा जाएगा। आज तो अभी बुधवार है।"

अनवर पल-भर चुप रहा। फिर माधवी के पास खिसक आया। उसका हाथ अपने हाथ में लेकर उसने कहा, "माधवी, जीवन कष्टमय या सुखमय बनाना अपने हाथ में है। इस उम्र में तुम्हारी यह उदासी देखकर किसी का भी दिल फट सकता है। कोई भी वजह हो तुम्हारी इस उदासी की, लेकिन तुम कुछ देर के लिए अपना ग़म भुलाने की कोशिश करो। मुझे तुम अपना सच्चा दोस्त समझो। मैं अपने खुदा की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैं तुम्हारी इस निराशा के कारण ही तुम्हारे इतने क़रीब आया हूँ। मित्रों से जो तसल्ली मिल सकती है, वह माँ-बाप से अथवा रिश्तेदारों से भी नहीं मिल सकती।"

माधवी ने कुछ नहीं कहा। चुप अनवर की मरहम-जैसी बातें सुनती

रही।

"क्या तुम अपने बारे में मुझे बता सकती हो, ताकि मैं भी कुछ समझ सकूं ?"

माधवी ने घोष बाबू का किस्सा छेड़कर थामस साहब तक का हाल बताया।

अनवर की बातों ने देखते-देखते माधवी का मूड बदल दिया। उस दिन अनवर ने माधवी को अपनी आवाज़ सुनायी।

"कितनी मीठी आवाज है आपकी !"

"शुक्रिया !" अनवर मुस्करा दिया। और गाड़ी घुमाकर होस्टल की ओर चलने लगा।

"फिर कब मिलोगी, माधवी ?" गाड़ी रोककर अनवर ने पूछा।

"कल दोपहर को मेरे साथ खाने आइए न !"

"कहाँ ?"

"चेतना में।"

"ओ० के० ! गुडनाइट।"

"गुडनाइट," माधवी ने भी धीरे से कहा और नन्हीं बालिका की भाँति दौड़ती हुई वह होस्टल में घुस गई।

३५

थामस से मिलना-जुलना बन्द हो चुका था, लेकिन उनकी जगह अनवर न ले सका, कोई भी न ले सका। माधवी का मित्र-परिवार आजकल बहुत बढ़ चुका था। अनवर उनमें खास था। कारण, वह संगीत जानता था, उसके सम्बन्ध में बातें कर सकता था और वह माधवी को केवल नारी के रूप में नहीं चाहता था। वह उसे संगीत में रुचि रखने वालों में से मानता था। अन्य मित्र नाम-

मात्र के मित्र थे। ये नाम-मात्र के मित्र सोचते—चलो, कभी तो माधवी उन्हें याद कर लेगी। वे सब माधवी को उसकी बातों से ही नाप-तोल सकते थे। उसके अस्तित्व की सतह तक पहुँचने लायक वे न थे। माधवी ने उन्हें समीप लाकर भी दूर रखा था। हाँ, कई ऐसे भी थे, जो इस समीपता-मात्र से ही संतुष्ट थे। संक्षेप में, वह एक सोसाइटी गर्ल बन चुकी थी।

इसी शोरो-गुल में कभी एकान्त में बैठकर वह थामस की स्मृति को अपने मन-पटल पर चित्र की भाँति देखने लग जाती।

"माधवी, तुम्हें पाकर मैं धन्य हो जाऊँगा।"

'थामसे !...'

"माधवी, विवाह के बाद हम अपना घर बनायेंगे। तुम उस घर की रानी और मैं राजा हूँगा। मैं दफ़्तर जाऊँगा। और तुम ? तुम काम मत करना, माधवी ! वरना घर सूना रहेगा। मैं लौटूँगा तो सबसे पहले तुम्हारे प्यार में खो जाऊँगा। फिर हम चाय पीकर घूमने चलेंगे। रात को भोजन करके लेटेंगे। मैं अपने काम की चर्चा करूँगा, तुम अपने लेखन की। फिर संसार की कोई शक्ति हमारे बीच नहीं आएगी। माधवी रानी ! तुम, केवल तुम ही इस सूनेपन को हटा सकोगी।..."

माधवी अपनी मेज़ से उठकर सेठजी की मेज़ के पास चली गई। सेठजी बाहर गये हुए थे। उसने धड़कते हृदय से वह परिचित नम्बर जोड़ा। और उत्तर की उपेक्षा में पेन्सिल से कुछ लिखने लगी।

"हलो।"

"हलो, कौन चाहिए ?"

"मिस्टर थामस हैं ?"

"जी नहीं। वह तो घर गये हुए हैं।"

"कब गये ?"

"एक सप्ताह हो चुका होगा।"

"कब लौटेंगे ?"

"यह तो कुछ कह नहीं सकते। इस रविवार को उनका मद्रास में विवाह होगा। उसके बाद बंगलोर जाने का उनका विचार है। कम-से-कम दो महीने लगेंगे। आप कौन हैं ?"

"जी···कोई बात नहीं," माधवी ने फोन बन्द कर दिया। किन्तु वहाँ से उठ न सकी। आँखों के सामने अन्धकार छा गया। उसे लगा कि वह गिर पड़ेगी। दोनों हाथों में अपना माथा पकड़, लड़खड़ाते कदमों से वह बाहर आयी।

"माधवी बेन, क्या हुआ ?" घबराकर मेहताजी ने पूछा।

"पूरबी को बुला लीजिये, मेहताजी !"

मेहताजी पूरबी को जानते थे। पूरबी अपने साथ अनवर को लेकर आ गई। उसकी गाड़ी में मूर्छित माधवी नर्सिंग होम पहुँच गई।

चिन्तित अनवर उपचार कर रहा था। पूरबी उससे छिपाकर आँखें पोंछ रही थी।

"पूरबी, मेहताजी से पूछो कि यह हालत होने से पहले माधवी क्या कर रही थी ?"

पूरबी फोन के पास गयी।

माधवी के होंठ कुछ फड़फड़ाने लगे। उसके अस्पष्ट शब्द अनवर समझ न सका। उसके चेहरे पर मुस्कान लौट आई। पूरबी तब तक आ गई।

"यह किसी को फ़ोन कर रही थी।"

"क्या तुम जानती हो, यह किसे फोन कर रही थी ?"

"हाँ", कहकर पूरबी ने दृष्टि दूसरी ओर फेर ली।

"क्या बात है ?" अनवर का ध्यान अब माधवी से हटकर पूरबी की ओर आ गया।

"कुछ नहीं, अनवर ! इसे एक दुखद समाचार मिला, उसीसे इसकी यह हालत हो गई।"

"तुम्हें कैसे पता चला ?"

"मेहताजी ने जब कहा कि माधवी फोन के बाद बेहोश हो गई तो मुझे एक शंका हुई और मैंने उस व्यक्ति को फोन किया। अनवर, माधवी जिससे प्रेम कर रही थी, उसने अपने घर जाकर विवाह कर लिया है। यही समाचार माधवी को मिला और···" पूरबी सिसकने लगी।

अनवर ने उसके कन्धे पर हाथ रखा, कहा कुछ नहीं।

माधवी होश में आ चुकी थी।

"पूरबी, मैंने अपना विचार बदल दिया था। यही कहने के लिए मैंने फोन किया। लेकिन उन्हें इतनी जल्दी थी कि एक बार मिलकर भी नहीं गये। एक अवसर और देकर देखते। किस उमंग से मैंने फोन जोड़ा था। सोचा था कि वे अपनी चिरविस्मृत माधवी की आवाज़ सुनकर चौकेंगे। फिर बातें होंगी और फिर हम मिलेंगे। मैं दौड़कर चली जाती, दो-दो सीढ़ियाँ एक साथ चढ़ती। लेकिन नहीं, पूरबी, मैं तो अपनी चौकड़ी ही भूल गई।"

"माधवी, तुम्हें आराम की सख्त ज़रूरत है। आराम से लेटी रहो, पूरबी कहीं नहीं जाएगी। उसे हम यहीं रखेंगे।"

"अच्छा, डाक्टर साहब !"

अनवर मुस्करा दिया।

"पूरबी, प्रेम को नाप-तौल नहीं भाता। मैं एक हाथ में प्रेम और एक हाथ में धर्म लिये खड़ी थी। मुझे निर्णय लेने में देर लगी। लेकिन क्या सारा दोष मेरा ही था?"

पूरबी आज उसे ढाढस न बँधा सकी। वह स्वयं रो रही थी। अनवर ने उसे दवाई पिलायी।

"पूरबी, मैं रो भी नहीं सकती। शायद आँसू पर्याप्त नहीं हैं इस दुख को व्यक्त करने के लिए मैं सच कहती हूँ। मैं रो नहीं सकती। आँसू नहीं आ रहे हैं। आते-आते रुक जाते हैं, जैसे वे अपना विचार बदल लेते हों, जैसे वे थामस से रूठ गए हों, जैसे···"

अनवर की दवाई अपना काम कर गई। माधवी के शब्द उसके

मुँह में ही रह गए। पूरबी ने अनवर की ओर देखा। वह अपना पाइप लिये खिड़की से बाहर ताक रहा था।

"मैं अब जा रही हूँ, अनवर !"

"अच्छा, कल सवेरे ही आना।"

"आऊँगी।"

पूरबी चली गई।

अनवर ने नर्स को बुलाया और उसे आवश्यक सूचनाएँ देकर बाहर चला गया।

संध्या के छः बज रहे थे। माधवी की आँख जब खुली तो उसे एक सुन्दर गुलाब का गुलदस्ता दिखायी दिया। उसने उठकर उसे नज़दीक से देखा। पूरबी ने उसके लिए रखा था। उसी समय नर्स ने प्रवेश किया। माधवी को देखकर वह मुस्करा दी। उसकी वह मुस्कराहट देख कर माधवी को उससे ईर्ष्या-सी हुई। मन-ही-मन उसने कहा—ऐसे मुस्करा रही है जैसे अभी उसका मुँह किसी ने चूम लिया हो। इस विचार से वह चौंक गई। तुरन्त ही पूछा, "डाक्टर साहब कहाँ हैं ?"

"अभी आते होंगे। विज़िट पर गये हैं। आप अब स्वस्थ लग रही हैं। इच्छा हो तो कपड़े बदल लीजिए।"

"कपड़े कहाँ हैं ?"

"यह क्या रखे हैं।"

माधवी के ही तो कपड़े थे। केवल वह रेशमी साड़ी उसकी नहीं थी, शायद पूरबी की थी। उसने कहा, "चलिए।"

माधवी नर्स के पीछे चली गई। नर्स के अनुभवी हाथों में न जाने क्या जादू था, माधवी ने अपने-आपको एक नन्हे बालक की भाँति उसके हाथों में सौंप दिया।

जब नहाकर माधवी बाहर आयी तो अनवर अपना बुझा हुआ पाइप लिये खिड़की के पास खड़ा था। माधवी सोफे पर बैठ गई। अब वह पूर्णतया स्वस्थ लग रही थी।

"माधवी, तबियत कैसी है?"

"आपकी मेहरबानी है।" माधवी ने हँसकर कहा।

अनवर ने नर्स को चाय लाने के लिए कहा और स्वयं आकर माधवी के पास बैठ गया। माधवी ने गुलदस्ते से एक गुलाब निकालकर अपनी चोटी में लगा लिया। अनवर ने देखा, कहा कुछ नहीं।

"पूरबी आने वाली है?"

"कल सवेरे आयेगी।"

माधवी चुप हो गई।

"कहीं घूमने चलना है?"

"अगर सम्भव हो तो मुझे इनकार नहीं।"

"अच्छा, तब तक आप कुछ खा-पी लीजिए। मैं गाड़ी निकालकर आता हूँ।"

उसी समय फोन की घण्टी बजने लगी। अनवर के मित्र का फोन था। अनवर कह रहा था, "नहीं, आज नहीं आ सकता।"

दूसरी ओर से कुछ कहा गया।

"रविशंकर को मैंने सुना है।"

माधवी उठकर अनवर के पास आ गई। उसने रविशंकर के सितार-वादन की चर्चा सुनी थी। अनवर ने फोन रोककर माधवी की ओर देखा।

"रविशंकर का प्रोग्राम है?"

"हाँ, माधवी! लेकिन तुम्हारा जाना ठीक नहीं होगा।"

"ओह, अनवर! मैं उनका सितार-वादन सुनना चाहती हूँ। अब तो मैं बिलकुल ठीक हूँ।"

अनवर इन्कार न कर सका। दो 'पास' के लिए कहकर दोनों चाय की प्रतीक्षा में बैठे रहे।

चाय आ गई। चाय के साथ टोस्ट वग़ैरह भी था। माधवी ने खाने से इन्कार किया।

"फिर तो रविशंकर को सुन चुकीं!"

माधवी हँसने लगी।

"कम-से-कम टोस्ट तो खाने ही पड़ेंगे।"

"अच्छा, यह लो, खा रही हूँ।"

अनवर ने नर्स से कहा, "हम बाहर जा रहे हैं। कोई मरीज़ आवे और मेरी आवश्यकता हो तो फोन कर लेना।"

"आप भी जा रही हैं?"

"हाँ," माधवी ने उत्तर दिया।

नर्स ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा। दोनों चले गये। कल यह लड़की अपने एक मित्र के विवाह का समाचार पाकर बेहोश हो गई थी, और आज बन-ठनकर चोटी में फूल लगा डॉक्टर के साथ प्रोगाम में जा रही है! सच, इसे क्या कहा जाय? ढूंढ़े से भी कोई शब्द उसे नहीं मिला। और डॉक्टर? कुत्ते की तरह उसके सामने दुम हिलाते हैं। उसके मुँह से एक गाली निकल गई। नर्सिंग के साथ ही उसे भी सीखा था।

३६

अनवर के साथ माधवी संगीत का कार्यक्रम सुनने जाना चाहती, किन्तु अधिकांश कार्यक्रम रात्रि के समय होने के कारण वह जा न पाती। माधवी का स्वास्थ्य अब काफ़ी सुधर गया था। उसका मित्र-परिवार उसके स्वागत के लिए बेचैन था। उस दिन माधवी दफ़्तर में काम कर रही थी। उसका फोन आया।

"कहिए!"

"आज शाम हम घूमने जा रहे हैं, आओगी?"

"हाँ, आऊँगी।"

किन्तु माधवी न जाती। लेकिन साफ़-साफ़ कहने में क्या मुश्किल थी? यही कि वह साहब फिर एक घंटे तक फोन ही न छोड़ते। अनवर

के अतिरिक्त वह अब किसी के साथ जाना नहीं चाहती थी। किन्तु जिनसे उसका परिचय था, उनसे पीछा छुड़ाना बड़ा कठिन था।

एक शाम माधवी दफ्तर से होस्टल लौट रही थी कि सामने प्रकाश बाबू को आते देखा। वह कतराके आगे बढ़ गई, लेकिन उन्होंने उसे पहचान लिया और 'शू-शू' आवाज़ लगाने लगे। माधवी को उन्होंने चार बार फोन किया था और माधवी ने उन्हें हर बार टाल दिया था। इसीलिए आज स्वयं आकर देखना चाहते थे। कपड़े के व्यापारी होने के कारण वे माधवी को चार धोतियाँ नज़र कर चुके थे। पैसे उन्होंने नहीं लिये थे, लेना भी नहीं चाहते थे। लेकिन माधवी उनके जाल में न आ सकी। वह तो उनसे मिलने तक को तैयार न थी। परसों उन्होंने एक पार्टी का आयोजन किया था। माधवी वायदा करके भी नहीं गयी। इतना धन खर्च करके आखिर उन्हें बिना साथी के ही पार्टी में सम्मि-लित होना पड़ा था।

माधवी काला घोड़ा पार करके रुक गई, किन्तु मुड़कर नहीं देखा। दूर से वही शू-शू की आवाज़ आयी, अथवा उसे भ्रम हुआ, कह नहीं सकते। वह दौड़कर आर्ट गैलरी में चली गयी। वहाँ कोई प्रदर्शनी चल रही थी। कलाकारों के झुण्ड प्रदर्शनी देखकर लौट रहे थे। कुछ अन्दर जा रहे थे।

चित्र कलापूर्ण ढंग से सजाकर रखे हुए थे। कुछ बड़े थे, कुछ छोटे। एक चित्र के आगे वह कुछ रुक गई। उसे लगा कि उसने इस चित्र को कहीं देखा है। दूसरे ही क्षण उसे यह कल्पना हास्यास्पद लगी। भला वह चित्र वह कहाँ देख सकती थी? असम्भव! वह आगे बढ़ गई। कुछ लड़कियाँ किसी कलाकार के विषय में बातें कर रही थीं। माधवी कान खोलकर सुनने लगी। पर उन्होंने एक बार भी कलाकार के नाम का उच्चारण नहीं किया। भला बिना उसका नाम जाने उसकी कला देखने कौन आएगा? दूसरे चित्र आधुनिक कला के थे। माधवी के लिए वे उलटे टंगे हुए चित्र की भाँति थे। उन्हें देखा-अनदेखा कर माधवी आगे

बढ़ रही थी। उसी समय उसकी दृष्टि एक परिचित व्यक्ति पर आकर रुक गई। वह उसके और करीब गयी।

"नमस्ते!"

"अरे, माधवी?"

"हाँ, अश्विन बाबू! आपके चित्र देखने आयी थी।" वह भला यह कैसे कहती कि एक साहब से पिंड छुड़ाने विवश होकर यहाँ आयी थी!

"धन्यवाद! देख लिए सारे? एक तो तुम्हारी आँखों का ही है। उसी पर मुझे सरकारी पुरस्कार मिला है।"

"सच?" माधवी अब समझी। यह वही चित्र था, जो अश्विन ने पहले ही दिन उसे देखकर बनाया था। उन्होंने पहले थामस को दिखाया था, फिर थामस ने माधवी को दिखाया था। इसीलिए वह चित्र उसे परिचित लगा। माधवी चुप खड़ी रही। वहाँ से जाने की इच्छा नहीं हुई।

"आओ, कुछ देर बैठते हैं।"

दोनों 'चेतना' में जाकर बैठ गए। चाय मँगाकर पी गई। अश्विन उसे अपने बारे में बता रहा था। अन्त में उसने पूछा, "थामस के पत्र तो नहीं आते?"

"नहीं।"

"अब वह बम्बई आना नहीं चाहता। मद्रास ही में काम कर रहा है। और हाँ, शादी भी कर ली है उसने।" कहकर अश्विन ज़ोर से हँसने लगा। फिर माधवी की आँखों में आँसू देख वह अवाक् हो गया। किन्तु दूसरे ही क्षण सब समझ गया। उसने धीरे से कहा, "माधवी, मुझे क्षमा करो।"

"कोई बात नहीं, अश्विन बाबू!"

दोनों उठकर बाहर आ गए और चुपचाप चलने लगे। माधवी के क़दम होस्टल की तरफ़ मुड़ गये। अश्विन साथ दे रहा था। माधवी ने उन्हें सारी बातें बता दीं—थामस की और अपनी!···विवाह का प्रस्ताव और माधवी का इन्कार। और फिर कैसे जब माधवी ने दुबारा उन्हें

फ़ोन किया तो उसे विवाह की ख़बर मिली। बीच में पूरबी और अनवर आदि का भी नाम आ गया। होस्टल के सामने, समुद्र-किनारे दोनों बैठे रहे। माधवी बोलने के मूड में थी और अश्विन सुनने के। अश्विन को उसने अपने बारे में बहुत-कुछ बताया। आठ बजे जाना आवश्यक था। विवश होकर माधवी उठ खड़ी हुई और जाने लगी, तो अश्विन ने उसका हाथ पकड़ लिया, "कल आओगी ?"

"हूँ," माधवी का शरीर सिहर उठा। वह कलाकार की दृष्टि से अपनी दृष्टि मिला न सकी। उसे लगा कि वह उनसे लिपट जाएगी। किन्तु रास्ते पर ? छी: ! दोनों विदा हुए।

माधवी खाना खाने बैठी थी। पूरबी उससे अनवर का हाल पूछ रही थी। माधवी कह रही थी, "बाजूबन्द मोरा खुल-खुन जाय···"

लड़कियाँ मुस्करा रही थीं। माधवी आलापसहित ठुमरी गा रही थी।

"वाह-वाह ! केसर बाई की याद आ रही है !"

"शु-शु ! ऐसा मत कहो।"

"क्यों ?"

"वह सुनेगी तो सबको जेल भेज देगी।"

"आख़िर क्यों ?"

"अरे, वह ठुमरी कभी नहीं गाती।"

सब हँस पड़ीं।

माधवी फिर तान लेने लगी, "जादू की पुड़िया···"

सप्तम पर आवाज जाते ही दूसरी लड़कियाँ भी माधवी की ओर देखने लगीं। वह उस्तादों की भाँति मुँह बना-बनाकर गा रही थी। सबकी आँखों में हँसते-हँसते पानी आ गया। एक तान तो उसने ऐसी ली कि उसकी पड़ोसिन का चश्मा ही उतार गया। खूब तालियाँ बजने लगीं। पूरबी ने सोचा, इसके मुँह में कुछ ठूँस देना चाहिए, तभी जाकर गाना बन्द होगा।

लेकिन माधवी ने उससे कहा, "रसूलन बाई भी ऐसे ही मुँह में पान

रखकर गाती है।" माधवी अब रसूलन बाई की नक़ल उतारने लगी, "कहाँ ले के चले हो दिल परदेसिया···!"

पूरबी ने हार मान ली। उसका हाथ पकड़कर वह उसे अपने कमरे में ले गई। माधवी गाकर ही उससे बात कर रही थी।

३७

'प्रिय माधवी,

तुमसे मिलने की सैकड़ों बार कोशिश की, लेकिन तुम नहीं मिलीं। आशा है, तुम अच्छी तरह हो। आज शाम तुम्हारा इन्तज़ार करूँगा। आओगी न?'

माधवी ने पत्र पढ़कर फाड़ दिया। मेज़ पर सिर झुकाकर वह पढ़ने लगी। उसकी नज़र बार-बार घड़ी पर जा रही थी। अन्त में घड़ी को भी उस पर दया आ गई। पाँच बजते ही अपना बैग उठाकर वह आर्ट गैलरी की ओर चल पड़ी। वह गुनगुना रही थी, राग मालकंस। ठुमरी तो अनवर को ही जँचती थी। अश्विन जैसे क्लासिकल व्यक्ति के लिए शुद्ध राग ही शोभा देता है। मालकंस में उसने एक भजन सीखा था:

'मत जा मत जा मत जा जोगी
पैइ···याँ परूँ मैं तोरी जोगी
मत जा···गम धनी सा···सानी-सानी धनीधम गम
धम गम गसा—मत जा

माधवी के पैर भी तीन ताल में उठ रहे थे। आज वह अपनी ही प्रशंसा कर रही थी। उसी तान को उसने आकार में दोहराया। आर्ट गैलरी की सीढ़ियाँ वह डबल दादरे में चढ़ गई। अश्विन उसीकी प्रतीक्षा में था।

"अश्विन!"

वह देखता ही रहा।

"क्या देख रहे हो ?"

"तुम्हारी आँखें। इनमें चमक है। कैनवास निर्जीव है। इनमें यौवन की शिखा है। मैं इन्हें कुछ न दे सका। अब दूंगा। आज तुमने काजल भी लगाया है।"

"आप ही ने तो कहा था।"

"हाँ, मुझे याद है।"

"चलो चलें यहाँ से।"

"चलो। कल का क्या प्रोग्राम है ?"

"कुछ नहीं।"

"तो गंगूबाई का गायन सुनने चलोगी ?"

"अवश्य। किस समय है ?"

"तीन बजे। पहले कभी सुना है ?"

"नहीं। केसर बाई को सुना है।"

"और किसका गायन सुना है ?"

"बड़े गुलाम अलीखाँ, हीराबाई बड़ोदकर और रविशंकर का सितार-वादन।"

"बिस्मिल्लाखाँ की शहनाई नहीं सुनी ?"

"नहीं। रिकार्ड सुने हैं।"

दोनों एक छोटे-से होलट में जाकर बैठ गए।

"क्या लोगी ?" अश्विन ने पूछा।

"चाय।"

"यह चाय का समय नहीं है, कुछ खाएँगे। मुझे तो बड़ी भूख लग रही है।" अश्विन ने दो के लिए खाना मँगाया।

माधवी नमक की शीशी से खेलने लगी। अश्विन ने उसका हाथ पकड़ लिया। माधवी फिर एक बार सिहर उठी। उसकी आँखें झुकी ही रहीं। अश्विन से आँख मिलाने का साहस उसे न हुआ। क्या यही

लजाना था ? लेकिन माधवी को तो लजाना नहीं आता। अश्विन की दृष्टि उस पर टिकी हुई थी। उसने धीरे से पुकारा, "माधवी !"

"क्या है, अश्विन ?"

किन्तु जब आँख मिली तो ऐसी सिहरन हुई कि माधवी को अपनी नज़र दूर करनी पड़ी।

उसकी भूख मिट गई थी, किन्तु अश्विन ने उसे मना-मनाकर खिलाया।

माधवी रह-रहकर जब भी उसकी ओर देखती, अश्विन की दृष्टि उससे टकरा जाती। हाँ, माधवी की ओर देखने से पहले वह होटल के मालिक की ओर अवश्य देख लेता।

"आज होस्टल जाने का मन नहीं हो रहा है, अश्विन !"

"सच ? क्या किया जाय ? जाना तो अनिवार्य है, माधवी ! क्यों न कल छुट्टी लेकर आ जाओ !"

"आऊँगी। लेकिन कल के आने में तो बहुत समय लगेगा।"

"मैं भी यही अनुभव कर रहा हूँ।"

माधवी दूसरे दिन छुट्टी लेकर आयी, किन्तु अश्विन से कुछ कहा नहीं। अश्विन ने पूछा तो केवल सिर हिला दिया। फिर क्या था ? अश्विन ने संध्या का कार्यक्रम मन-ही-मन बना लिया। गंगूबाई का कार्यक्रम सुनने के लिए दोनों बिलकुल आगे बैठे हुए थे। आज माधवी ने अपने लाल और पीले का मिलन किया था। काजल भी लगाया था और बिन्दी भी।

गायन आरंभ हुआ। राग था मारू विहाग। माधवी को पहले कुछ भाया नहीं, किन्तु जैसे-जैसे वह गाने लगी, वैसे-वैसे उनकी आवाज़ ने उसे मोह लिया। उन्होंने तानपूरा अपने हाथ में न लेकर अपनी छात्रा को दे रखा था और स्वयं गा रही थीं। बिना माइक के भी उनकी आवाज़ दूर तक पहुँच रही थी। आवाज़ में प्राण थे। हीराबाई का गायन जब उसने सुना था तब बार-बार उसकी यही इच्छा हो रही थी कि वह

जाकर उनका तानपूरा थाम ले ताकि राग अलापने में उन्हें कष्ट न हो। गंगूबाई वही कर रही थीं। उनकी एक-एक तान श्रोताओं के मुख से 'वाह-वाह' निकाल लाती थी।

"बहुत ही अच्छा गाती हैं।"

"मैंने कहा था न? तुम्हारी हीराबाई और केसरबाई कुछ भी नहीं हैं इनके सामने।"

"यह तो अपनी-अपनी पसन्द है। मैं केसरबाई को बुरा न कहूँगी। उनकी पानी-जैसी तरल तान के आगे कोई टिक नहीं सकता। हाँ, हीराबाई अवश्य इनकी तरह तानपूरा फेंककर मैदान में उतर सकती हैं। सच, बड़ा मजा आएगा।"

गंगूबाई द्रुत में गा रही थीं। श्रोताओं के सिर झूम रहे थे। माधवी भी खो गई। वह अनजाने ताल दे रही थी। अश्विन ने उसके हाथ पर अपना हाथ रख दिया। माधवी ने झूठे रोष से उसे देखा। फिर माधवी का मन चंचल हो उठा।

"चला जाए?"

"क्यों? इस तरह बीच में ही उठकर चले जाना कलाकार का अपमान करना है। कार्यक्रम अच्छा न लगे, तो भी उठकर जाने का साहस मुझे नहीं होता।"

माधवी ने एक नयी चीज़ देखी और सुनी। अनवर होता तो उठकर चल देता। किन्तु अश्विन उफ़, कितना अन्तर था दोनों में! गायन समाप्त होते ही माधवी और अश्विन बाहर आ गए। अश्विन के मित्रों ने उसे पल-भर के लिए बुला लिया। माधवी किसी को नहीं जानती थी। वह दूर खड़ी रही। अश्विन मुस्कराता हुआ लौटा।

"क्या बात है?"

"मेरे मित्र मेरी हँसी उड़ा रहे हैं।"

"क्यों?"

'कहते हैं कि मुझ-जैसा व्यक्ति इस जाल में कैसे फँस गया?"

"कैसा जाल ?" माधवी सचमुच समझी नहीं।

"यही बड़ी-बड़ी आँखों का।"

अब माधवी समझ गई। वह अश्विन के कुछ पास-पास चलने लगी।

अश्विन का छोटा-सा घर बड़ा ही साफ़-सुथरा था। सामान अधिक न था। कमरे के अनुसार ही उसे सजाया गया था। एक बात माधवी ने उसी समय अनुभव की। किसी खिड़की पर परदा नहीं टंगा था और न किसी सामान पर कपड़ा बिछाया गया था। माधवी ने अपने कमरे में मेज़ आदि पर एक ही रंग के कपड़े बिछाये थे। अश्विन का कमरा उसे नग्न-सा लगा। उसी दिन उसने तय किया कि वह प्रत्येक सामान को कपड़े पहनायेगी। चाय का सामान भी न था। प्यालियों की जगह बड़े-बड़े गिलास थे। थोड़े-बहुत बरतन थे और एक बिजली का चूल्हा। अश्विन अब तक चाय बना चुका था। दो गिलास भरकर, वह माधवी के पास आकर बैठ गया। आज दोनों निश्चिंत थे। माधवी को होस्टल जाने की जल्दी नहीं थी।

चाय पीकर माधवी अश्विन के कुछ चित्र देखने लगी। अश्विन लेटा हुआ उसे देख रहा था। एक चित्र नग्न पुरुष का था, जिसे देखते ही माधवी का हृदय धक् हो गया। उसने उसे उलटाकर रख दिया। अश्विन हँसने लगा।

"हँसी क्यों आई ?"

"वह चित्र क्यों नहीं देखा ?"

माधवी भी हँसने लगी।

"क्यों नहीं देखा, माधवी ?"

"छिः !"

"नग्न पुरुष नग्न स्त्री से सुन्दर लगता है।"

"मैं इस विषय पर बहस नहीं कर सकती।"

अश्विन और भी ज़ोर से हँस पड़ा, "देखो, माधवी···"

"कोई और बातें करो, अश्विन !"

"अरे-अरे, कैसे निर्लज्ज व्यक्ति से तुम्हारा पाला पड़ा है !"

"कोई बात नहीं। मुझे निर्लज्ज व्यक्ति ही पसन्द हैं।"

"सभी स्त्रियों को होते हैं। किन्तु बाहर से छि:-छि: करती रहती हैं। है ना ?"

"मुझे पता नहीं," माधवी जाकर अश्विन के पास ज़मीन पर बैठ गई। अश्विन का हाथ उसके माथे पर घूमने लगा।

"अश्विन !"

"हूँ।"

"आज मैं बहुत ही प्रसन्न हूँ। लगता है, जैसे वर्षों से खोया हुआ साथी आज मैं पा गई हूँ।"

"मैं भी यही महसूस कर रहा हूँ। लगता है, जैसे मैं जिसे खोज रहा था उसे पा गया हूँ। एक शान्ति-सी अनुभव कर रहा हूँ, जो अकेले रहने में नहीं मिलती। मैंने कभी किसी के साथ रहना पसन्द नहीं किया, किन्तु तुम्हारा साथ बहुत ही सुखकर लगता है, माधवी ! मैंने कभी किसी नारी को महत्त्व नहीं दिया, परन्तु तुम्हें मैं अतिशय मूल्यवान तथा पवित्र समझता हूँ।"

माधवी की आँखें भर आईं। पवित्र शब्द के लायक वह नहीं थी। क्यों अश्विन ने उसे इतना अधिक महत्त्व दिया ? अपने हृदय में उसने उस शब्द को छिपा लिया, कहा कुछ नहीं। वहीं ज़मीन पर बैठी रही। आज तक अपने मित्रों को अपने क़दमों में बिठलाने वाली आज अश्विन के क़दमों में बैठी हुई थी !

अश्विन रात के भोजन की चिन्ता करने लगा। अन्त में उसने बाहर जाकर भोजन लाने का विचार किया। वह पैसे लेने के लिए उठा।

"कहाँ जा रहे हो ?"

"जाकर भोजन ले आता हूँ। अभी आ जाऊँगा।"

"मुझे तो भूख नहीं है।"

"तब तुम होस्टल लौट जाओ।"

माधवी की आँखों में पानी भर आया। अश्विन पर जैसे बिजली गिरी। उसने बढ़कर माधवी को अंक में भर लिया, "माधवी, माधवी ! क्षमा करो मुझे। मेरा ऐसा कोई मतलब नहीं था। मैं तो केवल यही चाहता हूँ कि तुम अच्छी तरह खा-पी लो। तुम यहाँ से कभी मत जाना, माधवी ! मैं तो तुम्हें कब से अपना चुका हूँ। तुम्हीं ने आने में देर की, माधवी ! कहो, माधवी ! हम आजीवन साथ रहेंगे न ?"

माधवी सिसक रही थी। वह अश्विन की छाती में छिप गई थी। वह वहीं छिप जाना चाहती थी, ताकि कोई उसे बुला न सके। बड़ी देर तक वह चुप रही। फिर अश्विन ने उसे पुकारा, "माधवी !"

अब माधवी को लाज आने लगी। सच, यह लजाना उसे कब से आने लगा था !

"माधवी !"

"हूँ।"

"यहाँ रहोगी ?"

"रहूँगी।"

"मेरी होकर रह सकोगी ?"

माधवी ने गरदन हिला दी।

"मैं अमीर नहीं हूँ, माधवी ! किन्तु दोनों का काम चलाने लायक अवश्य कमा सकूंगा।"

"देखो, ऐसी बातें न करो। मैंने कब आपसे पूछा था, जो यह सब बता रहे हो !"

"अच्छा-अच्छा, नहीं करता, बस ?" अश्विन ने माधवी का लाल चेहरा दोनों हाथों में पकड़कर ऊँचा किया। फिर एक बार उसे देखा। असुन्दर नहीं, सुन्दर भी नहीं, किन्तु पुरुष के हृदय में तीर की भाँति चुभ जाने वाला वह मुखड़ा। उसे फिर एक बार निहारा, जैसे कोई चीज़ खरीदने के पश्चात् पैसे देने से पहले खरीदार एक बार और ध्यान से उसे देख लेता है।

"लेकिन, माधवी, यदि तुम खाने-पीने में आनाकानी करोगी तो मैं तुम्हें छोड़कर चला जाऊँगा।"

"मैं भी आपके साथ चलूंगी। अकेले नहीं जा पाओगे।"

"रात को चला जाऊँगा।"

"सोते समय मैं एक हाथ आपके गले में डाले रखूंगी।"

"ना-ना, तब तो मुझे नींद ही नहीं आएगी।" अश्विन ने हँसकर कहा।

"और मुझे वैसे नहीं आएगी।"

दोनों हँस पड़े। दोनों ने जीवन की एक बड़ी समस्या पल-भर में हल कर ली थी।

"अच्छा चलो, चलकर खा आते हैं।"

"चलो," माधवी ने अश्विन के गले में बाँहें डाल दीं।

उसने उसका मुख चूम लिया।

ताला लगाकर दोनों चल पड़े।

उस रात बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनीं। वधू और वर ने अपने विवाह का कार्यक्रम बनाया।

"तुम्हारे लिए एक बढ़िया साड़ी खरीदेंगे।"

"और आपके लिए?"

"मैं तो धोबी के धुले खद्दर के कपड़े ही पहनूंगा।"

"तो मैं क्यों बढ़िया साड़ी पहनूं?"

"इसलिए कि तुम्हें पसन्द है।"

"आपसे किसने कहा?"

"अब तो मैं तुम्हारी नस-नस से परिचित हो गया हूँ, मुझसे कुछ छिपा न सकोगी।"

"खैर, जाने दीजिए। मैं भी खद्दर की सफेद धोती ही बाँधूंगी।"

"जैसी इच्छा। लेकिन शाम को तो मेरी पसन्द की साड़ी पहनोगी न?"

"क्यों नहीं ? आपकी तरह साधु-महात्मा मैं नहीं बन सकती।"

"बनने की आवश्यकता भी नहीं।"

"अच्छा, फिर क्या करेंगे ?"

"तुम चाहो तो घूमने चलेंगे।"

"ऐसा नहीं। हम बम्बई से बाहर कहीं चले जायेंगे।"

"कहाँ ?"

"क्यों न हम एलोरा की गुफा देखने जाएँ ?"

"मंजूर।"

"फिर आगे ?"

"आगे कुछ नहीं। लौटकर काम में लग जाना होगा। तुम्हें अपने लेखन पर ध्यान देना होगा।"

माधवी को अब याद आया कि कभी एक दिन लिखना ही उसका लक्ष्य था। किन्तु पिछले कुछ महीनों से, महीनों से नहीं वर्षों से, उसने घूमने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं किया था।

"अच्छा, अब सो जाओ।"

"नींद नहीं आती।"

"क्यों ?"

"इतना भी नहीं जानते ?"

"अच्छा, आओ, मैं सुलाऊँ।"

माधवी अश्विन की गोद में छिप गई और ,उसके सो जाते ही अश्विन जाकर सोफे पर सो गया।

३८

एलोरा की गुफा देखने तीन दिन से आये हुए थे, किन्तु दोनों का जी भरा नहीं था। वहाँ की कलाकृति साधारण मानव को भी हिला देने में समर्थ है, फिर कला-प्रेमी का क्या

रहना ! दोनों ने एकमत होकर यह तय किया कि जब तक एलोरा की कलाकृति का भली भाँति अध्ययन न कर लेंगे, अजन्ता की ओर नहीं जायेंगे। अश्विन रात को बड़ी देर तक अध्ययन करता रहता। माधवी उसके पास लेटे-लेटे सो जाती। अश्विन अकेले रहने का आदी था, किन्तु माधवी उसे अकेला न रहने देती। वह स्वयं अब अकेले रहना नहीं चाहती थी। अकेले में उसका अतीत उसे सताने लगता। विशेषकर उसे अनवर की याद आती। तीन-चार पत्र भेजने पर भी माधवी ने उसे कोई उत्तर नहीं भेजा था। अनवर ने उसके मन को कभी भूलकर भी दुखी नहीं किया था। एक बार भी उसने उसे वासना की दृष्टि से न देखा था। फिर क्यों माधवी ने ऐसा किया ? क्या अनवर को उसने केवल अपने मन-बहलाव का साधन बना रखा था ? अथवा माधवी को उसके दिल पर चोट पहुँचाकर कुछ तृप्ति मिली, वह स्वयं नहीं जानती थी। किन्तु रह-रहकर अनवर की स्मृति उसे दुखी अवश्य कर जाती। कई बार उसने सोचा कि वह उसे एक पत्र भेजकर उससे क्षमा माँग लेगी। किन्तु दूसरे ही क्षण वह विचार उसे चुभने लगता। कल तक वह स्वतन्त्र थी, किन्तु अब वह किसी की हो चुकी थी। उस पवित्र बन्धन पर वह कभी आँच न आने देगी। अब तक स्वच्छंद पक्षी की भाँति विहार करने की आदी माधवी अब क़ैद के पंछी की तरह हो गई थी। हाँ, यह क़ैद सुखकर है। कारण, सैयाद भी स्वयं क़ैद में है। बाहर की गरमी से अश्विन ने उसे बचा रखा है। वह अब इसी छाँह में बैठेगी। और कहीं नहीं जाएगी। अपने मन का साथी पा जाना क्या कम है ? माधवी ने जब भी अपने विवाह की कल्पना की थी, तो यही सोचा था कि वह किसी बड़े कलाकार की पत्नी बनेगी। हाँ, सफ़ेद खद्दर की धोती बाँधकर उसका विवाह होगा, इसकी उसने कभी कल्पना नहीं की थी। उसने यही सोचा था कि बड़ी धूमधाम से उसका विवाह होगा, शहनाई बजेगी, वह कीमती साड़ी बाँधेगी।...शहनाई के करुण स्वर माधवी के कानों में गूँजने लगे। उसे घर की याद आई। आँखे डबडबा गईं। उसके भाग्य में विदाई का

सुख नहीं था। वह अपने घरवालों से दो बार बिछुड़ चुकी थी। हाँ, अपनी स्वतंत्रता से भी वह बिछुड गई थी, किन्तु उसका उसे दुख नहीं था। तो क्या वह सुखी है ? और नहीं तो क्या ? वह वहाँ से उठकर अश्विन के कमरे में चली गई। वह सो चुका था। पुस्तक हाथ से छूटकर छाती पर अस्त-व्यस्त पड़ी हुई थी। माधवी ने धीरे से पुस्तक हटा ली। अश्विन जगा नहीं। उसने झुककर उसका माथा चूमा और जाकर सो गई।

३९

दूसरे दिन अश्विन के नाम तार आ गया। बम्बई लौटना आवश्यक था। दोनों अपने छोटे-से महल में लौट आये। राजा अपने काम में जुट गया और रानी घर सँभालने लगी।

कैसी रानी और कैसा राजा ! रानी यदि बनना है तो चौके का काम करना होगा। घर की हर समस्या हल करनी होगी। खर्च भी कम करना होगा और घर में हर चीज़ मौजूद रखनी होगी। उफ़ ! माधवी तो तंग आ गई। अश्विन उसे ढाढ़स बँधाता। माधवी को भोजन बनाना नहीं आता, तो अश्विन उसे सिखाने लगता। किन्तु इससे माधवी और चिढ़ जाती, मुँह बनाकर बैठ जाती। अश्विन उसे मनाता, कहता, "माधवी, तुम तो लेखिका हो। अगर रसोई न बना सको तो कोई बात नहीं। मैं तो इसे बुरा नहीं मानता।"

लेकिन माधवी इसे बुरा मानती। नारी का जन्म लेकर वह भोजन नहीं बना सकती ! लानत है उस पर ! और फिर राजा के हृदय में रानी का प्रवेश तो पेट के रास्ते ही होता है। वही रास्ता उसके लिए बन्द था। वह रो पड़ी। अश्विन उसे सिनेमा दिखाने ले गया। उस दिन के लिए माधवी अपना दुख भूल गई।

दूसरे दिन माधवी ने एक षड्यंत्र रचा। अश्विन के दफ़्तर जाते ही वह बाज़ार चली गई। रसोईघर के लिए आवश्यक बरतन आदि उसने

ख़रीदे। बने-बनाए मसाले लिये और एक पाकशास्त्र की पुस्तक लेकर वह घर लौटी।

वह पुस्तक में बनाने की विधि पढ़ती और भोजन बनाती जाती, लेकिन उसे दस बार उठकर पुस्तक में देखना पड़ रहा था। उसने सोचा, अख़्तरी बाई की ग़ज़ल कितनी आसान होती है! एक-दो बार सुनते ही याद हो जाती है। लेकिन यह मिर्च-मसाले तो आँख में पानी ला देते हैं।

भोजन ग़ज़ब का स्वादिष्ट बना था। अश्विन ने रोज़ की अपेक्षा अधिक खाया। बार-बार उसकी प्रशंसा करता रहा। आख़िर वह भी पुरुष ही ठहरा।

४०

एलोरा से लौटने के पश्चात् माधवी बराबर लिखने का प्रयत्न करती, किन्तु कुछ बन नहीं पड़ता। उसे थामस की याद आई। सोचा, उनकी कहानी लिखूँ। आरम्भ तो कर दी किन्तु अधिक लिख न सकी। भला माधवी उनके मनोविकार क्या जाने! और केवल कल्पना करके लिखना ईमानदारी न होगी। उसने लिखा हुआ सब काट दिया। उसी समय दूधवाले ने आवाज़ दी। माधवी उठ गई।

दूसरे दिन माधवी ने और प्रयत्न किया, लेकिन कुछ बना नहीं। एक अक्षर भी लिखा नहीं जा रहा था। वह बैठी रही दूध वाले की प्रतीक्षा में। वही आकर उसका उद्धार करेगा।

रात को माधवी ने अश्विन से कहा, "मैं दो दिन से प्रयत्न कर रही हूँ, कुछ लिखा नहीं जाता। शायद मुझमें लेखक के गुण नहीं हैं।" अन्तिम वाक्य के साथ-साथ माधवी के आँसू आ गए।

"वाह, माधवी! दो दिन के प्रयत्न में ही रो पड़ी।" अश्विन ने उसके बालों को सहलाते हुए कहा, "दो दिन में ही यदि कोई लिख पाता तो आज सैकड़ों लेखक दिखायी देते। इसके लिए तो तपस्या करनी

पड़ती है। तुम्हें अध्ययन करना होगा। मैंने तो एक दिन भी तुम्हें पढ़ते नहीं देखा। पढ़ते रहने से मन लिखने के लिए तैयार हो जाता है। और जब तक कल्पना तुम्हें क़लम उठाने को बाध्य न करे, तब तक पढ़ते रहना ही ठीक है।"

माधवी चुपचाप सुनती रही। अश्विन अपनी युवावस्था में ही प्रकांड विद्वान् बन चुका था। माधवी को उस पर गर्व था। उसने उसी दिन से अध्ययन करने की ठान ली।

४१

"अश्विन, आज मैं घर जाना चाहती हूँ।"

"अवश्य। कब जाओगी?"

"आज दोपहर में।"

"उन्हें ख़बर दी है?"

"हाँ।"

"कब लौटोगी?"

"शाम तक आ जाऊँगी।"

"ठीक है।" अश्विन अपने काम में जुट गया, और माधवी तैयारी में।

दफ़्तर जाने से पहले अश्विन ने माधवी को पास बुलाकर कहा, "वहाँ रह मत जाना, माधवी! मैं बिलकुल अकेला रह जाऊँगा।"

"नहीं अश्विन, रह कैसे जाऊँगी?" वह खिलखिलाकर हँसने लगी।

"देखा न, मुझे तुमने क्या-से-क्या बना दिया!" अनमना-सा अश्विन चला गया।

आज माधवी उमंग-भरे हृदय से अपने माता-पिता से मिलने जा

रही थी। पत्र द्वारा उसने उन्हें सूचना दी थी और उत्तर में उसे पिता ने आग्रहपूर्वक घर बुलाया था। वह जानती थी कि सब उसकी प्रतीक्षा में बैठे होंगे।

माधवी घर की सीढ़ियाँ दौड़कर चढ़ गई। माँ बाहर ही खड़ी थी। माधवी उसके गले लग गई। पिता को भी वह गले मिली। राज घर नहीं था। माधवी जाकर पड़ोसियों से भी मिल आई।

"माधवी, अब तो तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर गया है। अश्विन का क्या हाल है?"

"ठीक है। राज कहाँ है, माँ?"

"सौदा लाने गया है, आता ही होगा।"

"माधवी, तुमने एक भी गहना नहीं पहना है?"

"क्यों? गहने क्या आवश्यक हैं?"

"क्यों नहीं? लोग तो ताने मारेंगे।"

"लेकिन माँ, मुझे तो गहने पसन्द ही नहीं हैं, तुम तो जानती हो?"

"ठीक है, बेटी, लेकिन सुहागिन और विधवा में कुछ तो अन्तर होना चाहिए।"

विधवा शब्द माधवी के हृदय पर चोट कर गया। वह चुपचाप अपने आँसू निगल गई। माँ अपनी पुत्री के लिए उस शब्द का प्रयोग ही कैसे कर सकी?

माधवी के मनोविकार माँ पढ़ न सकी। वह अपनी ही दिशा में सोच रही थी। अपनी पसन्द का साथी चुनने के बावजूद माधवी को एक गहना भी न मिल सका! आखिर अश्विन-जैसे पागल व्यक्ति में उसने क्या देखा, जो विवाह कर लिया! उसने अश्विन का वर्णन शरद से सुना था।

"और बेटी, होने पर न पहनने और मजबूरन न पहनने में बड़ा अंतर है।"

"जाने दो, माँ!" माधवी बात बढ़ाना नहीं चाहती थी।

"यह हार तू ले जा, मधु ! मैं इसका क्या करूँगी ?" माँ ने अपना हार निकाला।

माधवी जानती थी कि माँ को वह हार बहुत ही पसन्द था। सौ बार गिरवी रखा जा चुका था। माँ ने उसे आखिर तक बिकने नहीं दिया। आज माँ माधवी को वही हार उठाकर दे रही थी।

"रहने दो, माँ !"

"नहीं, मधु ! जब तुम इस तरह बिना गहनों के रहती हो तो यह हार क्या मेरे गले में अच्छा लगेगा ?"

"मुझे नहीं चाहिए, माँ ! रख दो। मैंने अश्विन से कुछ नहीं लिया, तुमसे भी कुछ नहीं लूँगी।"

उसी समय राज आ गया। बात वहीं समाप्त हो गई।

"दीदी, तुम आ गईं ! आज तो तुम बड़ी अच्छी लग रही हो ! कुछ मुटा भी गई है दीदी ! है न माँ ?"

"हाँ, पहले से तो अच्छी हो गई है।"

"तुम अकेली क्यों आई ? जीजाजी को भी ले आतीं।"

"आयेंगे। पहले तुम तो आओ।"

"मैं भी आऊँगा, उनके चित्र देखने आऊँगा। माँ, अश्विन बम्बई के ए-वन कलाकार हैं, जानती हो ?"

"हाँ, सुना तो मैंने भी है।"

माँ गहनों का किस्सा भूल गई, किन्तु माधवी न भूल सकी। उस दिन तीसरी बार माधवी अपने घर से यही निश्चय करके निकली कि वह फिर कभी यहाँ नहीं आएगी।

४२

उस दिन माधवी ने अश्विन को अपनी पहली कहानी की कथावस्तु सुनायी :

"कहाना का नाम है, दो चोटियाँ।"

"हूँ।" अश्विन ने अपना चेहरा गम्भीर कर लिया।

माधवी पहले कुछ शरमायी, फिर सुनाने लगी :

संध्या के चार बज रहे थे। श्याम पाठशाला से घर लौट रहा था। उसके साथी कब के चले गये थे। आज वह अकेला ही जाना चाहता था, कुछ सोचना चाहता था। उसका बाल-मन किसी मधुर स्मृति से एक काल्पनिक संसार बसाना चाहता था। आज का दिन ही ऐसा था। उसका जन्म-दिवस था वह। किन्तु उसके अतिरिक्त किसी को भी स्मरण नहीं था। इस दिन की प्रतीक्षा करने वाली उसकी माता तो उसे छोड़कर चल बसी थी। इतना भी नहीं सोचा भगवान् ने कि मेरा क्या होगा? कौन मुझे लाड करेगा? कौन मुझे प्यार करेगा?...उसका गला रुँध गया।

घर जाने को मन नहीं कर रहा था। वहीं रास्ते में बैठ गया। अब वह अपनी नयी माँ के बारे में सोचने लगा। वह बुरी तो नहीं है, पर अच्छी भी नहीं है। उसमें माँ-जैसी कोई बात नहीं है। सब लोगों पर बस रोब जमाती है। पढ़ती रहती है दिन-भर। किसी को मिठाई खाने नहीं देती। श्याम को जबरदस्ती दूध पिलाया करती है। पानी उबालकर घड़े में भरती है। सबको प्रेस किये हुए कपड़े पहनाती है। स्वयं भी प्रेस की हुई धोती में अकड़ती रहती है। सबेरे-सबेरे ही काजल लगाती है और दो चोटियाँ बनाती है।...वे दो चोटियाँ श्याम के सामने झूलने लगीं। वे दो जहरीले साँपों की तरह उसकी पीठ पर फुत्कारती रहती हैं। बार-बार सामने वे आती रहती हैं और वह हर बार उन्हें पीछे करती है। श्याम को उनसे कुछ चिढ़ हो गई थी। जब वह कोई काम करने झुकती तब श्याम देखता रहता। अब वे चोटियाँ सामने आयेंगी और फिर उन्हें लौटाया जाएगा। यही दिन-भर चलता रहता। श्याम चाहते हुए भी वहाँ से दृष्टि न हटा पाता।

तो क्या वह बुरी है? छिः, श्याम झूठ नहीं बोलेगा। श्याम को किसी चीज की कमी न थी। कहानियों की पुस्तकें, वाटर कलर, आदि

"बहुत सुन्दर है, माधवी !" अश्विन उठकर बैठ गया ।

माधवी का समाधान हुआ । वह जानती थी कि अश्विन झूठी प्रशंसा कभी नहीं करेगा ।

"अब इस कहानी को सरल, सुन्दर भाषा में लिख लेना चाहिए । और एक बात याद रखनी चाहिए माधवी, कि सच्ची साहित्यिक कृति का निर्माण सरल नहीं है । अविराम श्रम करना पड़ता है । जो स्वाभाविक देन है उसी से काम नहीं चलता । उसे खूब माँजना पड़ता है, तब जाकर उसमें चमक आती है ।"

माधवी सुन रही थी ।

४३

"यह क्या है, अश्विन ?"

"दिल्ली का पुराना किला ।"

"लेकिन यह यहाँ क्या है ?"

"आजकल उसमें लोग रह रहे हैं ।"

"ओह !"

माधवी एक चित्र को ध्यानपूर्वक देख रही थी । अश्विन अपने चित्रों को पोंछकर रख रहा था । पुराने किले की वे ऊँची-ऊँची दीवारें और उन्हीं में एक जगह एक छोटा-सा घर । घर में हर चीज़ है । अंगीठी पर भोजन बन रहा है, एक चारपाई बिछी हुई है, यहाँ-वहाँ कपड़े टंगे हुए हैं, दो-चार बरतन भी रखे हैं । माधवी ने चित्र रख दिया । वह वहीं सो गई । अश्विन ने देखा और मुस्करा दिया । वह अपना कैनवास ठीक करके काम करने लगा । बड़ी देर तक वह काम करता रहा । बारह बजे उसने अपना सामान रखा । किन्तु उसी समय कुरसी हटाने से आवाज़ हो गई । माधवी घबराके उठ बैठी । अश्विन उसके पास आ गया, "कुछ नहीं माधवी रानी ! कुरसी की आवाज़ थी । सो जाओ ।"

"ओह, मैं तो कुछ और ही सोच रही थी !"

"तुम तो सो रही थीं, माधवी !"

"तब तो वह स्वप्न ही था या मेरा नया प्लाट।"

अश्विन को हँसी आई। कहा, "दिन-रात प्लाट ही बनाती रहती हो !"

अश्विन बैठ गया। माधवी उससे लिपटकर सोने की चेष्टा करने लगी। किन्तु अब वह अश्विन को सुनाये बिना सो नहीं सकेगी। अश्विन को नींद आ रही थी।

"अश्विन !"

"बारह बज रहा है, माधवी ! अब सो जाओ।"

"अब तो सुनना ही पड़ेगा।"

"कल लिख लो, फिर मैं पढ़ लूँगा।"

"क्या ?"

"तुम्हारी कहानी।"

"कौनसी कहानी ?"

"वही जो सुनाना चाहती हो।"

"अच्छा, अब यहीं पर सो जाओ।"

"ना, मैं अपनी जगह पर ही ठीक रहूँगा।"

"तो मैं वहाँ आ जाऊँगी।"

"तुम्हारी ज़िद्द कब छूटेगी ?"

"मर जाऊँगी तब।"

अश्विन ने उसे अपनी भुजाओं में कस लिया। उस छोटी-सी बात ने उसका रंग ही उड़ा दिया था, "माधवी, अभद्र बातों का इस घर में क्या काम ?"

"माफ़ करना, अश्विन, मैंने मजाक किया था।"

"माधवी, जानती हो, मैं उस कल्पना-मात्र को भी सह नहीं सकता। तुम्हारे बिना मेरा जीवन असह्य होगा। फिर कभी ऐसी अभद्र भाषा का

प्रयोग मत करना, माधवी !" अश्विन ने उसका मुँह चूम लिया।

माधवी ने उस दिन से सचमुच ही ज़िद्द छोड़ दी।

दूसरे दिन अश्विन माधवी की कहानी पढ़ रहा था :

पुराने किले की उस वीरान जगह पर नबी अपनी नवविवाहिता वधू के साथ आया हुआ है।

'बानू !"

उत्तर नहीं।

'बानू, पसन्द है यह जगह ?"

सिर हिल गया। नबी की मुस्कराहट चेहरे पर फैल गई। सामान रखकर वह सौदा लेने चला गया। बानू ने अपना घूंघट खोल दिया। गेहुँए रंग की भोली-भाली बानू सोलह साल से अधिक की न होगी। किले की ऊँची दीवारों के किनारे एक कमरे के आकार का हिस्सा तीन तरफ़ से बन्द था। सामने दीवार नहीं थी, अथवा टूट गई थी। बानू ने बढ़कर सामान खोल दिया और अपना महल सजाने लगी। नबी दाल और आटा ले आएगा। उसने काम छोड़कर अंगीठी जला ली, फिर सामान लगाने में मग्न हो गई। अपना छोटा-सा शीशा एक कोने में टाँग दिया और एक बार अपना चेहरा उसमें निहार लिया। आज वह ग़ज़ब की सुन्दर लग रही थी—दुलहिन जो थी। रात ही को तो उनका निकाह हुआ था। उसके बाद वह रेल का सफ़र। बानू ने अभी तक अपना घूंघट नहीं हटाया था और नबी ने भी कुछ कहा नहीं था।

"बानू ! बेगम !"

बानू ने बढ़कर चीज़ें ले लीं। अंगीठी जल चुकी थी। वह खाना बनाने में तन्मय हो गई। नबी बीड़ी सुलगाकर चारपाई पर लेट गया। वहाँ से वह बानू को देख रहा था। उसके मेहंदी वाले हाथ तथा चाँदी की मुँदरी उसे गुदगुदा रही थी। सौ बार उसने सोचा कि जाकर उसका हाथ पकड़ ले, किन्तु दूसरे ही क्षण वह अपना विचार बदल देता। भला रात तक इन्तज़ार नहीं कर सकता! बानू उसकी मूर्खता पर

अवश्य हँसेगी। उसने बीड़ी फेंक दी। किन्तु वहाँ से अपनी दृष्टि नहीं हटायी।

बानू शरमा रही थी। नबी की नज़र उसके हाथों में चुभी जा रही थी। दाल उतारते समय भान न रहा। उबलते भगोने को उठाया तो वह हाथ से छूट गया। नबी दौड़कर आ गया।

"हाथ जला तो नहीं? लाल हो गया है। कोई बात नहीं। मैं दवाई लगाता हूँ। आओ।"

बानू जाकर चारपाई के पास बैठ गई। नबी दवाई ले आया। साहब लोगों के पास रहकर उसने बहुत बातें सीख ली थीं। रुई से उसके हाथों पर दवाई लगा दी। वह शरमा रही थी। उसका बदन काँप रहा था। घूँघट खींचने के लिए हाथ उठाया, लेकिन नबी ने हाथ पकड़ लिया।

"रहने दो।" उसने रेशमी घूँघट हटा दिया।

बानू की आँखें ज़मीन ताकने लगीं। इनको उठाना तो सर्वथा बानू की इच्छा पर निर्भर था।

"बानू," उसने उसकी ठोड़ी ऊँची की, किन्तु निगाह ऊँची न हुई। नबी उस यौवन को देखता रहा। बानू का उसकी ओर न देखना भी कितना भला लग रहा था! उसने सोचा, रात को यह झिझक भी ख़त्म होगी और फिर जल्दी भी क्या है?

बानू उठकर रसोई बनाने चली गई। नबी ने उसे रोका नहीं। वह बैठा रहा रात का इन्तजार करते।

बानू ने नबी को खाना खिलाया, फिर खुद भी खाया और चौका साफ़ करने लगी।

नबी बीड़ी के कश लगाता रहा। उसने सोचा, क्या यह काम ख़त्म ही न होगा? किन्तु अब सचमुच ही उसका काम ख़त्म हो चुका था। वह पानी लेकर चारपाई के पास आ रही थी। पानी की क्या आवश्यकता है? भला यह आग एक गिलास पानी से बुझ सकेगी? नबी

हँस पड़ा। उसने दूसरे ही क्षरण बुज़ुर्गों की तारीफ़ की। यदि बानू को बिना काम के नबी के पास आना पड़ता तो वह शरमाती। कभी न आती। बानू ने पानी का गिलास रख दिया और बैठकर उसके पैर दबाने लगी।

उस रात खूब बातें हुईं। नबी ने कहा, "तू सचमुच बेगम है। इसी लिए तो क़िले में रहने का भाग्य प्राप्त हुआ है।"

"हूँ।"

"हो सकता है, जहाँ हम सोये हैं, किसी बड़े बादशाह की बेग़म हर रोज़ घूमने आती हो, या अपने शौहर का इन्तज़ार करती हो।"

"हूँ," बानू की कल्पना को नबी की बातों ने पर दे दिए, और वह अपनी भारी पलकें लिये उड़ने लगी।

नबी सो चुका था। बानू ने भी करवट ली और सो गई।

चारों ओर निबिड़ अंधकार था। कभी-कभी चमगादड़ उस भयानक सन्नाटे को भंग कर देते। यकायक उस अंधकार का नाश करता हुआ उजाला आया। एक के बाद एक महल के कक्ष रोशनी से जगमगाने लगे। शहज़ादी अपने उद्यान में बैठी हुई है। पास ही उसकी सखियाँ बैठी हैं। एक फ़नकार दासी सितार पर केदारा छेड़ रही है। बीच-बीच में तार कसने के लिए स्वर रोक दिए जाते हैं। फिर सितार बज उठता है। नवयौवना शहज़ादी फव्वारे को ताक रही है। वह किसी मधुर स्मृति में खोयी जान पड़ रही है। रोशनी से जलराशि पिघली हुई चाँदी के समान लग रही है। अब सितार खूब बजने लगा है। केदारे ने किले की दीवारों में जान भर दी है। फव्वारे से पानी का गिरना भी ताल-बद्ध हो गया है। तभी फनकार की 'मुलाहज़ा फरमाइए' की आवाज़ शहज़ादी को इस दुनिया में खींच लाती है। वह फ़नकार के सितार-बादन पर मुग्ध है।

थोड़ी देर में ही कुछ दासियाँ बड़ी-बड़ी परातें लेकर आती हैं, उनमें शहज़ादी के शादी के कपड़े और गहने रखे हुए हैं। सखियाँ उसका सिंगार

करने लगती हैं। एक-एक करके शहज़ादी आभूषणों से लदी जाती है। अन्त में उसे इत्र लगाया जाता है। शहज़ादी सज-धजकर शीशे के सामने खड़ी हो जाती है। सखियाँ उस लावण्य को कुतूहल से देख रही हैं।

"शहज़ादी, तुम्हारे लावण्य से होड़ करने वाला कोई नहीं।"

"शहज़ादी आज चाँद से भी ज़्यादा हसीन लग रही हैं।"

"आज शहज़ादी धन्य हो जाएगा।"

शहज़ादी का चेहरा प्रसन्न है। वह शहज़ादे के नाम से ही शरमा जाती है। उसी समय एक दासी दौड़ती हुई वहाँ आ पहुँचती है। सब मुड़कर देखती हैं। वह हाँफ रही है। कुछ कहना चाहती है, किन्तु साँस फूलने के कारण कह नहीं रही है।

"क्या बात है?" शहज़ादी पूछती है।

"शहज़ादी, एक हसीना इसी क़िले में बैठकर सोलह सिंगार करने में मस्त है।" गुलनार कहती है।

"तो क्या तुम सचमुच ही उसे हसीन समझती हो?"

गुलनार का मस्तक झुक जाता है, "गुस्ताखी माफ हो, वह सचमुच ही हसीन है।"

अब शहज़ादी गुस्से से लाल हो जाती है। वह आदेश देती है, "उसे पचास कोड़े लगवाओ।"

दासी का चेहरा पीला पड़ जाता है। मस्तक उठाए बिना ही वह कहती है, "उसे शहज़ादी के सामने हाज़िर करने की इजाज़त मिले। अगर वह हसीन न हुई तो सौ कोड़े भी मंज़ूर हैं।"

"अच्छी बात है, ले आओ उसे।"

गुलनार दौड़ती हुई चली जाती है। शहज़ादी महल के एक कोने से दूसरे कोने तक चक्कर काटने लगती है। क्या वह सचमुच हसीन होगी? क्या वह मुझसे भी अधिक हसीन होगी? वह शीशे के सामने खड़ी हो जाती है।

अपनी छवि देखकर उसे फिर एक बार विश्वास होता है कि

उससे हसीन औरत इस दुनिया में अभी पैदा नहीं हुई। वह ज़ोर से चीख पड़ती है—नामुमकिन, नामुमकिन ! और घूमकर अपनी सखियों की ओर देखती है।

गुलनार उसे ले आती है। वह हसीना भी शरमा रही है। तो क्या यह भी दुलहिन है ?

"ए, इधर देखो !"

चेहरा ऊँचा उठता है।

"सुबहान अल्लाह !" शहज़ादी के मुँह से निकल जाता है। सब देखते हैं कि वह हसीन है। गुलनार देखती है कि वह शहज़ादी से भी हसीन है।

"क्या नाम है ?"

"बानू।"

"क्या कहा ?" शहज़ादी चिल्लाकर पूछती है।

"बानू," वह थर-थर काँप रही है।

"बानू !···बानू", शहज़ादी पागल हो उठती है। वह हँसने लगती है, "हा-हा-हा ! बानू !···"

सखियाँ और दासियाँ चिन्तित हो उठती हैं। एक सखी आगे बढ़ती है, "शहज़ादी ! शहज़ादी ! अपने को सँभालने की कोशिश करो !"

"सुना तुमने ? इसका नाम बानू है ! हा-हा-हा !"

"होश में आइए, शहज़ादी !"

"हा-हा-हा !" किले की दीवारें हिलने लगती हैं। शहज़ादी की हँसी सबको रुला देती है।

"अब बारात आती होगी शहज़ादी, खुदा के लिए शान्त हो जाइए !"

"शान्त! हा-हा-हा !" गुलनार ठीक कहती है कि यह सचमुच हसीन है। मैं इसे इनाम दूँगी। इसने मेरा नाम भी चुराया है। और देखो यह भी दुलहिन है। अब मेरे पास कुछ भी नहीं बचा।"

बाहर शहनाई के स्वर सुनायी देने लगते हैं। शहज़ादी कुछ शान्त होती है। वह दुबारा बानू की ओर नहीं देखती। उसकी नजर दरवाज़े

पर टिक रहती है। बानू वहाँ से धीरे-धीरे जाने लगती है। कोई उस पर ध्यान नहीं देता। महल से निकलकर जब वह बाहर पहुँचती है, तो शहज़ादा सामने से आता दिखाई देता है। वह दीवार से सटकर खड़ी हो जाती है। शहज़ादा दुलहिन को देखकर घोड़े से उतर पड़ता है।

"बानू, तुम ? यहाँ तक कैसे आयीं ?"

बानू थर-थर काँपती हुई कुछ कह रही है। किन्तु शहनाई के स्वर उसकी बात हवा में उड़ा ले जाते हैं। शहज़ादी उसकी ठोड़ी पर हाथ लगाती है, लेकिन बानू ज़ोर से झिड़ककर कहती है, "मैं आपकी दुलहिन नहीं हूँ।" किन्तु उसकी हर बात हवा हो जाती है।

"शहज़ादी ! शहज़ादी !" गुलनार दौड़ती हुई आती है, "ग़ज़ब हुआ ! कहर हुआ !"

"क्या हुआ ? क्या हुआ ?" सब उसे घेर लेती हैं।

गुलनार रोती हुई शहज़ादी की ग़लती का क़िस्सा सुनाती है। सबके चेहरे का रंग उड़ जाता है।

शहज़ादी का चेहरा तमतमाने लगता है, "तो इतनी जुर्रत कि शहज़ादा उसे लेकर बाहर ही से चला जाय। मैं उनका रिश्ता नामंजूर करती हूँ।"

"शहज़ादी, अनर्थ हो जाएगा।"

"शहज़ादी, ग़लतफ़हमी की इतनी कड़ी सज़ा ?"

"शहज़ादी, आपको तुमसे मुहब्बत है।"

"तो यहाँ आने तक वह सब्र न कर सके ? क्या कोई दुलहिन उन्हें आधे रास्ते में मिलने जा सकती है ?"

उसी क्षण शहज़ादा बानू को घसीटता हुआ महल में दाखिल होता है। वह असली शहज़ादी को देखता है, तो उसका माथा ठनकता है। वह अपनी तलवार से बानू का घूंघट हटा देता है और उस हसीन चेहरे को देखता ही रह जाता है, अपनी नज़र हटा नहीं पाता। अब तक शहज़ादी को सब देख लेते हैं।

'शहज़ादे सलामत रहें ! पधारिए !"

"तशरीफ़ ले आइए !"

"यह कौन ?"

"एक लौंडी।"

"लौंडी इतनी हसीन नहीं हो सकती।"

"आप धोखा खा गए हैं। यह लौंडी ही है ?"

शहज़ादी की हालत खराब है। ज़ाहिर है कि शहज़ादे को बानू से प्यार हो गया है। उसे चक्कर आने लगता है।

"क्या नाम है इस हसीना का ?" शहज़ादा पूछता है।

कोई उत्तर नहीं देता।

"इसका नाम भी बानू है, शहज़ादे !"

"बानू ! बानू !" शहज़ादी हँसने लगती है, किन्तु अब क्रोध की जगह निराशा ले लेती है।

"बानू !" शहजादा बुदबुदाता है। वह सचिन्त उस यौवन को निहार रहा है। वह दुविधा में है। इसी समय शहज़ादी अपनी अँगूठी से ज़हर चाट लेती है और देखते-देखते वह बेहोश हो जाती है। महल में तहलका मच जाता है। दौड़-धूप होने लगती है। हकीम आ पहुँचते हैं।

"बानू ! हा-हा-हा !" वही हँसी एक बार फिर गूँज उठती है।

सबकी आँखों में पानी है। गुलनार ज़ार-ज़ार रो रही है। मौलवी दुआएँ माँग रहे हैं।

"मैं भी बानू, वह भी बानू। चोर है वह। गुलनार, उसे कोड़े···"

दूसरे ही क्षण सब शान्त हो जाता है। शहज़ादी के प्राण उड़ जाते हैं। गुलनार दौड़कर अपनी सारी शक्ति लगाकर कोड़ा खींचती है।···

बानू चीख पड़ी। वह चारपाई से नीचे गिर पड़ी। उसका सारा शरीर दर्द कर रहा था। नबी ने उसे उठाकर चारपाई पर रख दिया।

उसी दिन नबी बानू को लेकर वहाँ से चला गया।

"कल्पना सुन्दर है, माधवी !"

"अच्छा !" माधवी प्रसन्न थी। यह उसका दूसरा सफल प्रयत्न था।

"ऐतिहासिक कहानियाँ लिखना सरल काम नहीं है, माधवी ! इतिहास का ज्ञान आवश्यक है। प्रत्येक पात्र को ठीक उसकी जगह पर रखना चाहिए, नहीं तो आलोचक कच्चे चबा जायेंगे।"

"ठीक है, पर यह तो ऐतिहासिक कहानी नहीं है।"

"पुराना क़िला तो ऐतिहासिक है।"

"मानती हूँ। पर बानू का इतिहास से कोई संबंध नहीं। नबी से कुछ क़िस्से सुनकर वह मन-ही-मन शहज़ादे और शहज़ादी के बारे में सोचती रही। इसके अतिरिक्त वह सुन्दर थी और नवविवाहिता। स्वप्न में एक सुन्दर कहानी बन आई। यदि नबी फ्रॉयड के स्वप्न-शास्त्र से परिचित होता तो क़िला कदापि न छोड़ता।"

"वाह, कमाल किया माधवी, तुमने ! अब फ्रॉयड के तर्कों से तुम मुझे परिचित कराओगी ?"

"हट, आप ही तो मेरे गुरु हैं।"

४४

विवाह के पश्चात् माधवी के मन में अनजाने ही एक भयंकर कल्पना कभी-कभी सिर उठाती। उस कल्पना से माधवी सिहर उठती, रो पड़ती। किन्तु प्रकट में अश्विन से कुछ न कहती। वह जानती थी कि अश्विन से कुछ कहना उसके प्रेम का अपमान करना है। उसे लगता, अश्विन उसे छोड़कर कहीं दूर चला जाएगा। फिर बहुत ढूंढ़ने पर भी वह कहीं मिलेगा नहीं, पुकारेगी तो वह उत्तर नहीं देगा। आप ही सोचती और आप ही रोती। इस प्रकार की कल्पना करने का कोई कारण नहीं था। वह जानती थी कि अश्विन जीवन-भर के लिए उसका हो चुका है। इसी कल्पना पर आधारित

माधवी ने एक कहानी लिखी और उसी दिन रात को वह अश्विन् को सुनाने लगी :

सुनो, कहानी का नाम है 'सो क्या जाने पीर पराई' । एक है मीना, उसका पति है अजीत । दोनों का प्रेम-विवाह हुआ है । विवाह से पहले मीना किसी और से प्रेम करती थी, किन्तु उनमें किसी कारणवश अन-बन हो जाती है और वे अलग हो जाते हैं । मीना अजीत को अपने अतीत के विषय में बताती है, किन्तु अजीत कभी उसे कोई महत्त्व नहीं देता, न ही उसमें कोई बुराई देखता है ।

मीना एक मानी हुई लेखिका है । उसकी कहानियाँ शहर के बड़े-बड़े पत्रों में छपती हैं । एक दिन वह अपने अतीत पर आधारित एक कहानी लिखती है जिसकी पत्र-पत्रिकाओं में बहुत प्रशंसा होती है ।

एक दिन अजीत उस कहानी को पढ़ लेता है । अब उसकी मनः-स्थिति विचित्र हो जाती है । वह बिना कारण ही दुखी हो जाता है । वह सिगरेट सुलगाकर वहीं बैठा रहता है ।···खाँसी के कारण अजीत को धूम्रपान करने की डॉक्टर द्वारा मनाही थी । मीना ने भी उसे मना करके सिगरेट से दूर किया था । अजीत ने भी मीना के कारण सिगरेट छोड़ दी थी । किन्तु अब वह सारे वायदे तोड़ देना चाहता है । कमरे में उड़ते धुएँ की ओर अजीत एकटक देखता रहता है । उसके भीतर कहीं कहानी के अस्पष्ट स्वर सुनायी दे रहे हैं ।

"मीना !"

"हूँ ?"

"सुनो, मीना !"

मीना ऊपर देखती है ।

"आज मैं कितना खुश हूँ, तुम भी नहीं जानतीं ! इस एकान्त समुद्र-तट पर, पूनम की रात्रि में तुम्हारा मुख निहारकर मैं धन्य हो गया हूँ । इस समय तुम परी जैसी सुन्दर लग रही हो । इन अपलक नेत्रों से यौवन रीझता है, मीना ! मैं···मैं···"

अजीत दूसरी सिगरेट सुलगा लेता है, मानो अपना हृदय सुलगा लेता है।

"फिर क्या हुआ ?"

"होना क्या था ? वही हुआ होगा, जो ऐसे अवसरों पर हुआ करता है। उसने मीना का मुख अपने दोनों हाथों से ऊँचा किया होगा और उसके अधर पर अपने अधर रखे होंगे। फिर मीना ने अपनी बाँहें उसके गले में डाल दी होंगी और कहा होगा, 'आज मैं कितनी ख़ुश हूँ !' ठीक वैसे ही जैसे मुझसे कहती है।"

"फिर आगे ?"

"आगे क्या होना है ? वही जो आम होता है। कुछ नयी बात तो नहीं हो सकती। उन बातों को लिखा नहीं जाता, समझा जाता है। और यदि कोई लिख दे तो वह अश्लीलता मानी जाएगी। जो लिखा जाता है उस पर अमल नहीं होता। और जो हम करते रहते हैं वह लिखा नहीं जाता।"

"अजीत ! अजीत !" मीना ने आवाज़ दी। पल-भर के लिए अजीत खिल उठा, किन्तु फिर उसके चेहरे पर उदासी छा गई।

"अजीत, यह क्या ? फिर सिगरेट कब से शुरू हो गई ? अपना वायदा भूल गए क्या ?"

"नहीं, भूला नहीं।"

उस दिन मीना अजीत को समझ न सकी। भोली मीना अपनी ओर से अजीत को मनाने का प्रयत्न करती रही। उसकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि अजीत किस बात पर नाराज़ है। उसने तो उसे कुछ भी नहीं कहा था।

अजीत मीना को जलाने के लिए दिन-भर सिगरेट पीता रहता। मीना आँसू पीकर चुप रहती। आज कई दिन से वह भोजन भी नहीं बनाती थी। अजीत बाहर से खा आता। मीना से पूछता तक नहीं। एक दिन अचानक उसे अपनी कहानी याद आयी। और यह भी विचार

आया कि शायद अजीत वह कहानी पढ़कर ही नाराज़ है। कहानी को हृदय-स्पर्शी बनाने के लिए उसमें कल्पना की मात्रा कुछ अधिक थी। इसी कारण अजीत ने सोचा होगा कि मीना ने उसे अपने अतीत के विषय में सब-कुछ नहीं बताया। वह उठकर अजीत के कमरे में चली आयी। अजीत सामान बाँध रहा था। मीना का हृदय काँप गया। उसने धीरे से पुकारा, "अजीत !"

"क्या है ? चली जाओ यहाँ से !" अजीत गरजा।

"अजीत, एक बार मेरी ग़लती तो मुझे बताते ! एक मौक़ा तो देते, अजीत !'

"जानकर अनजान मत बनो !"

"अजीत, मुझे छोड़कर मत जाओ ! मैं भी आपके साथ चलूँगी !"

"बनो मत, मीना ! अब तक खूब बनाया !"

"आख़िर कुछ साफ़-साफ़ तो बताओ किस बात ने हमें इतना दूर कर दिया ?"

"यह लो, पृष्ठ पाँच और छः दुबारा पढ़ लो !" अजीत ने पत्रिका मीना के माथे पर मार दी।

"अजीत, वह तो कहानी है, कल्पना है ! सत्य तो सब मैंने आपको बता दिया है।"

अजीत सामान बाँध चुका था। मीना ने उसे रोकने का प्रयत्न किया। किन्तु वह मीना को धकेलकर नीचे उतर गया। मीना रो रही थी, "अजीत ! अजीत ! मत जाओ। मुझे अकेले छोड़कर मत जाओ ! मैं भी आ रही हूँ ! आ रही हूँ, अजीत !"

मीना भी नीचे उतर आयी, "अजी···त ! अजी···त ! मैं भी आ रही हूँ।"

ताँगा जा चुका था। मीना चिल्ला रही थी, "अजीत ! अजीत ! अजीत ! अश्विन ! अश्विन ! मुझे छोड़कर मत जाओ, भी आ रही हूँ, अश्विन ! अश्वि···न !···"

माधवी ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर रो रही थी। आँखों से पानी सचमुच बह रहा था। अश्विन ने उसके कंधे पकड़कर उसे हिलाया, "माधवी, कहानी पढ़ रही हो कि रो रही हो ? मैं तो इधर हूँ, माधवी !"

"ओह, अश्विन ! मैं···मैं सचमुच समझी कि आप मुझे छोड़कर चले गये।" वह अश्विन से लिपटकर सिसक रही थी।